चन्दामामा
अक्तूबर १९९५
Rs
5

रविवार यानि पियानो, नर्सरी राइम्स
और साथ ही हरपल बस मॉर्टन

MORTON
SWEETS

मुझे रविवार बहुत प्रिय है...... हर समय नर्सरी राइम्स की ताल, मम्मी का साथ और मार्टन का रसभरा स्वाद.
मार्टन मेरे परिवार की सदा से ही पहली पसंद रही है।
उत्कृष्ट शुद्धता और स्वादिष्ट तथा साथ ही अनेकानेक जायकों में उपलब्ध—क्रीमयुक्त दूध,
ग्लूकोज़ और चीनी की पौष्टिकता से भरपूर।
चॉकलेट एवं कोकोनट कुकीज़ रोज एक्लेयर्स, सुप्रीम चॉकलेट तथा कोकोनट टाफियाँ,
लेक्टोबोनबोन्स, मैंगोकिंग एवं अन्य अनेकों मनलुभावन स्वादों में उपलब्ध।
आहहा ! क्या लाजवाब स्वाद !

जीवन का
अनुपम माधुर्य

मॉर्टन कन्फैक्शनरी एण्ड
मिल्क प्रॉडक्ट्स फैक्ट्री
पो० ओ० मढ़ौरा-८४१४१८, सारन, बिहार

भारत में सर्वाधिक बिकने वाले कॉमिक्स
डायमण्ड कॉमिक्स

अंकुर बाल बुक क्लब के सदस्य बनें और बचाएं रु. 200/- वार्षिक

हर माह छः कॉमिक्स (48/-रु. की) एक साथ मंगवाने पर 4/- रुपये की विशेष छूट व डाक व्यय फ्री (लगभग 7/-) लगातार 12 वी.पी. छुड़ाने पर 13वीं वी.पी. फ्री।

1 वर्ष में महीने	बचत (रु.)	कुल बचत (रु.)
12	4/- (छूट)	48.00
12	7/- (डाक व्यय)	84.00
1	48/- (13वीं वी.पी. फ्री)	48.00
सदस्यता प्रमाण पत्र व अन्य आकर्षक 'उपहार', स्टिकर और 'डायमण्ड पुस्तक समाचार' फ्री		20.00
		200.00

सदस्य बनने के लिए आप केवल संलग्न कूपन को भरकर भेजें और सदस्यता शुल्क के 10 रु. डाक टिकट या मनीआर्डर के रूप में अवश्य भेजें। इस योजना के अन्तर्गत हर माह 20 तारीख को आपको वी.पी. भेजी जायेगी जिसमें छः कॉमिक्स होंगी।

हाँ! मैं "अंकुर बाल बुक क्लब" का सदस्य बनना चाहता/चाहती हूं और आपके द्वारा दी गई सुविधाओं को प्राप्त करना चाहता/चाहती हूं। मैंने नियमों को अच्छी तरह पढ़ लिया है। मैं हर माह वी.पी. छुड़ाने का संकल्प करता/करती हूं।

नाम ____________________

पता ____________________

____

डाक __________ जिला __________ पिनकोड __________

सदस्यता शुल्क 10 रु. डाक टिकट मनीआर्डर से भेज रहा/रही हूं।

मेरा जन्म ____________________

नोट : सदस्यता शुल्क प्राप्त होने पर ही सदस्य बनाया जायेगा।

डायमण्ड कॉमिक्स का
900 वाँ अंक

चाचा चौधरी राका का खेल

खूंखार राका फिर आ गया है, उसने चमत्कारी दवाई पी रखी है जिससे वह मर नहीं सकता, उसके जुल्मों से चारों तरफ दहशत फैली है। कम्प्यूटर से तेज दिमाग वाले चाचा चौधरी और शक्तिशाली साबू के सामने राका एक विशाल समस्या बनकर खड़ा है।

डायमण्ड कॉमिक्स गिफ्ट बॉक्स

चाचा चौधरी गिफ्ट बॉक्स 6 कॉमिक्स + 10 स्टिकर	48.00
पिंकी गिफ्ट बॉक्स 6 कॉमिक्स + 10 स्टिकर	48.00
बिल्लू गिफ्ट बॉक्स 6 कॉमिक्स + 10 स्टिकर	48.00
फैण्टम गिफ्ट बॉक्स 4 कॉमिक्स + 10 स्टिकर	60.00
अमर चित्रकथा गिफ्ट बॉक्स 6 कॉमिक्स + 10 स्टिकर	60.00

डायमण्ड कॉमिक्स प्रा. लि.
X-30, ओखला इन्डस्ट्रियल एरिया, फेज-2, नई दिल्ली-110020

यही है
प्राइम की
विजेता
रेखा.
PRIME LEADER
PRIME GENIUS
MATHEMATICAL DRAWING INSTRUMENTS
PRIME RANK
PIDILITE
PRIME MERIT
WINNER
आ गए, उत्कृष्ट दर्जे के कम्पास बॉक्स. यह अचूक कामगिरी, संपूर्ण नियंत्रण एवं उत्कृष्ट कार्यकुशलता के लिए खास तौर पर तैयार किए गए हैं.
तो दीजिए अपने नन्हें-मुन्नें को प्राइम. जिसके सहारे वो चढ़ता जाए कामयाबी की सीढ़ियां, और बने विजेता.
प्राइम मेरिट
प्राइम रैंक
प्राइम जीनियस
प्राइम लीडर
◂ मैथमेटिकल ड्रॉइंग इन्स्ट्रुमेंट्स ▸
PIDILITE PRODUCTS
PID 63 95 HIN

चन्दामामा

अक्तूबर १९९५

एक प्रति : ५.००

वार्षिक चन्दा : ६०.००

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

सहिष्णुता

चीन देशवासी हर वर्ष को एक नये नाम से पुकारते हैं। उदाहरण के लिए उन्होंने एक नये वर्ष को नाम दिया 'कुत्ते का वर्ष'। हमारे देश में भी तमिलनाडु में ऐसी प्रथा है। यहाँ इस साल का नाम रखा गया 'युव वर्ष' याने युवाओं का वर्ष। इस संदर्भ में हमें 'शिशु वर्ष' का स्मरण आता है। १९७९ में संयुक्त राष्ट्र संघ ने उस वर्ष को उक्त नाम दिया। संयुक्त राष्ट्र संघ भी हर वर्ष को नये नाम से संबोधित करता है। पिछले वर्ष का नाम था 'परिवार' और १९९५ है 'सहिष्णुता'।

१९७१ में संयुक्त राष्ट्र संघ ने अपने सदस्यों से अपील की कि वे शिशुओं के लिए विशिष्ट कार्यक्रम बनावें। इसके उपरांत, उसने शिशुओं के अधिकारों के लिए नियम बनाये और शिशुओं के लिए विश्व-व्यापी सभाओं का आयोजन भी किया। १९९४ था 'परिवार वर्ष'। संयुक्त राष्ट्र संघ ने इस समय पारिवारिक सत्संबंधों पर ज़ोर दिया और कहा कि परिवार के सदस्य एक-दूसरे को चाहें, एक-दूसरे के प्रति आदर की भावना रखें व निस्वार्थ भावना से सहनशील रहें।

'भगवद्गीता' में कहा गया है कि मित्र व शत्रु से एक समान व्यवहार हो, ईर्ष्यालू तथा घृणास्पद व्यक्ति से भी सद्व्यवहार हो, अच्छे और बुरे से भी हमारे व्यवहारों में कोई भेद ना आये। इसे कहते हैं - सहिष्णुता। 'गीता' में कहा गया है कि ऐसे सहिष्णु व्यक्ति संपूर्ण मानव हैं, और ऐसे व्यक्तियों का अनुकरण होना चाहिये।

विचारों की भिन्नता के कारण मानव कभी-कभी गुटों या समूहों में बंट जाते हैं। यह कोई ज़रूरी नहीं है कि अधिक संख्यकों की ही बात मान ली जाए। किन्तु यहीं चाहिये सहिष्णुता और उदारता। इन गुणों से मनुष्य का व्यक्तित्व भी निखरता है। मनुष्य के व्यवहार में सबसे मुख्य है, धार्मिक सहिष्णुता।

वर्ष : ४९ अक्तूबर १९९५ अंक : २

एक प्रति : रु. ५/- वार्षिक चन्दा : रु ६०/-

समाचार - विशेषताएँ
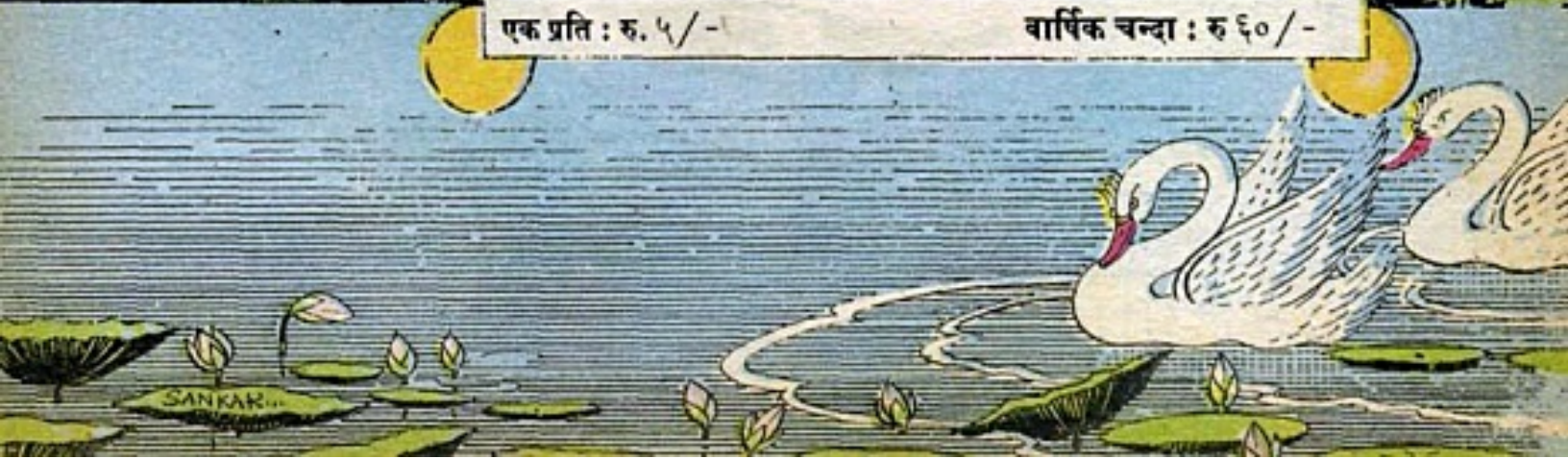
सत्रह साल का डाक्टर

अमेरीका में रहनेवाले भारतीय डाक्टरों ने, चिकागो में, जून ३० को एक सभा की आयोजना की। अमेरीका के अध्यक्ष बिल क्लिंटन इस सभा के मुख्य अतिथि थे। भाषण देने जब वे उठ खड़े हुए, तब उन्होंने 'डाक्टर अंबटि' को पुकारा। वहाँ सत्रह साल का एक युवक उठ खड़ा हुआ। सभास्थल पर जितने भी उपस्थित थे, सबकी दृष्टि उस युवक पर केंद्रित हुई। बिल क्लिंटन ने उस युवक का अभिनंदन करते हुए अपना हाथ उठाया और कहा "जब डाक्टर अंबटि का परिचय मुझसे किया गया और बताया गया कि संसार के सबसे कम उम्र के ये डाक्टर हैं, तब उनके प्रति मुझमें विनय की भावना उत्पन्न हुई।" तब सब सभासदों ने ज़ोर से तालियाँ बजायीं। क्लिंटन थोड़ी देर रुके और फिर बोले "अभी-अभी मुझे मालूम हुआ कि उनके भाई भी उन्नीस साल के बुढ़ापे में ही डाक्टर बने।'" तब सभा हर्षध्वनियों तथा हँसी से गूँज उठी।

अमेरीका के अध्यक्ष की बधाई के पात्र डा. अंबटि बालमुरली कृष्ण की प्रतिभा असाधारण है। चार साल की उम्र में ही मुश्किल से मुश्किल गणित भी बड़ी ही आसानी से कर पाता था। छे साल की उम्र में प्रथम ग्रेड में शामिल किया गया। कुछ ही हफ़्तों में (महीने भी नहीं) उन्नत ग्रेड में तरक्की हुई। तीन सालों में पाँच और तरक्कियाँ मिलीं। १९९१ में याने अपने तेरहवें वर्ष में उसने जीव-विज्ञान शास्त्र में बी.ए. की उपाधि प्राप्त की। न्यूयार्क के विश्वविद्यालय के सबसे कम उम्र का स्नातक कहलाया गया। इसके बाद चार सालों में उसने मौंट सिनाय मेडिकल स्कूल से वैद्य-शास्त्र में उपाधि प्राप्त की।

अंबटि बालमुरली कृष्ण के पिता अंबटि मोहनशव ने औद्योगिक इंजनीयरी में डाक्टरेट पायी। माता गोमती भी विद्याशास्त्र में डाक्टरेट हैं। भाई अंबटि जयकृष्ण नेत्रवैद्य में डाक्टरेट हैं।

बालमुरलीकृष्ण के पहले, एक इज़राइल युवक कम उम्र में ही डाक्टर बना। इटली के पेरुजिया विश्वविद्यालय से अपने अठारहवें साल में वैद्य-शास्त्र में उसने उपाधि पायी थी।

बालमुरली कृष्ण और उसके बड़े भाई जयकृष्ण ने मिलकर छे सालों के पहले 'ऐड्स' को लेकर एक पुस्तक प्रकाशित की। निकट भविष्य में उसका दूसरा संस्करण भी प्रकाशित होनेवाला है। पर्यावरण की रक्षा के संबंध में दोनों भाइयों से रचित पुस्तक प्रकाशन के लिए तैयार है।

अमेरीकी अध्यक्ष बिल क्लिंटन ने कहा "आज दोनों को देखकर आपके बंधु व मित्रगण ही नहीं, बल्कि हम भी गर्व महसूस कर रहे है।"

अलावा इसके, कहने लायक एक और विषय भी है। अंबटि भाइयों की तरह बिल क्लिंटन ने भी अपने यौवन-काल में बहुत-सी विजयें प्राप्त कीं। वे अपने छब्बीसवें साल में प्रोफेसर बने। इकीसवें साल में एक राज्य के गवर्नर बने। छियालीसवें साल में अमेरीका के अध्यक्ष बने।

राक्षस की दुकान

बहुत पहले की बात है। राक्षस-राज्य में धर्मनंदन नामक राक्षस रहा करता था। बचपन से ही उसके विचार अच्छे थे। उसकी आदतें अच्छी थीं। इसलिए उसे अन्य राक्षसों का बरताव बिल्कुल भाता नहीं था। उसकी बात कोई सुनता भी नहीं था।

धर्मनंदन को राक्षसों की कोई भी पद्धति अच्छी नहीं लगती थी। वे साधु जंतुओं को बड़ी दारुणता से मारते थे और खुश होते थे। उपकारी का भी अपकार करते थे।

धर्मनंदन से यह सब कुछ सहा नहीं जा रहा था। वह कमज़ोर होता गया। उसके माँ-बाप ने राक्षस वैद्य से उसकी परीक्षा करवायी। बहुत-से सवाल पूछने के बाद उस राक्षस वैद्य ने कहा "राक्षस-कुल में तुम्हारा जन्म ग़ल्ती से हो गया है। तुम्हारा रोग मानसिक है। कुछ समय तक मनुष्यों के राज्य में जाकर रहो। जब तक वहाँ रहोगे, तब तक महीने में एक ही बार सही, कम से कम एक आदमी को मारकर खा जाना। जिस दिन हमारे राज्य में लौटने की तुममें इच्छा जगेगी,समझो, उस दिन तुम्हारा रोग दूर हो गया।"

धर्मनंदन ने उसे आज्ञा मानकर मानवों के एक नगर में प्रवेश किया। कुछ दिनों तक वह नगर भर में घूमता रहा और मानवों के बारे में बहुत कुछ जाना।

मनुष्य की शक्ति सीमित है। किन्तु अपनी बुद्धि के बल पर वह असाध्य कार्य को भी साध्य कर रहा है। उनमें भी धोखेबाज़, दग़ाबाज़ और अपराधी हैं। पर वे इन बुरी प्रवृत्तियों से बचने के लिए कानून बना रहे हैं। अनुशासन के साथ जीवन बिताना उनका निरंतर प्रयत्न है।

धर्मनंदन को मनुष्य की जीवन-पद्धति अच्छी लगी। उसने उसी नगर में बसने का निश्चय किया। तदनुसार उसने एक सुंदर युवक का रूप धारण किया। एक दिन उसने एक सुंदर युवती को देखा। उसने उससे शादी करनी चाही।

उस युवती का नाम था, लता। बहुत ही अच्छी थी, पर बहुत ही ग़रीब। पिता रोगी था। हमेशा खाट ही पर लेटा रहता था। माँ दो-तीन घरों में बर्तन माँजकर थोड़ा-बहुत धन कमाती थी। भाई पढ़ा-लिखा था, पर बेकार था। उसे कोई नौकरी नहीं मिली। मेहनत करके कमाने से वह दूर भागता था। लता भी काम करके अपने माँ-बाप की सहायता करना चाहती थी, पर बालिग़ लड़की को काम पर भेजना उस घर की रीति के विरुद्ध था।

एक दिन लता जब मंदिर जा रही थी, तो धर्मनंदन ने बिना किसी झिझक के उससे अपना प्रेम व्यक्त किया। वह हँस पड़ी। उसकी हँसी में दुख था, विवशता थी। वह बोली "मेरी शादी मेरी इच्छा पर निर्भर नहीं है। इसी गाँव में दूर का मेरा एक रिश्तेदार है। एक साल पहले उसकी पत्नी मर गयी। वह चाहता है कि मुझसे दूसरी शादी करूँ। उसकी इच्छा पूरी होने पर वह मेरे पिता की चिकित्सा करवायेगा। भाई को नौकरी दिलवायेगा। पहली पत्नी से उसके चार बच्चे हुए। बडी लड़की मेरी उम्र की होगी। मेरे घर में इस शादी के लिए कोई तैयार नहीं हैं। मेरी शादी उस आदमी से करना नहीं चाहते। हमने अपना घर उसके पास गिरवी रखा है। सप्ताह के अंदर हमने अपना निर्णय उसे नहीं सुनाया तो वह हमें घर से बाहर निकाल देगा।"

"उसका कर्ज़ मैं चुकाऊँगा। तुमसे शादी करूँगा" धर्मनंदन ने उसे आश्वासन दिया।

"मैंने तो पहले ही कह दिया ना, मेरी शादी मेरे अधीन नहीं है। हमारे बड़ों से

हो सकता है कि मेरे उस रिश्तेदार को एक हफ़्ते के अंदर कोई राक्षस निगल जाए ।'' उसके इस जवाब से धर्मनंदन चौंक उठा । उसके, नगर में आये एक हफ़्ता बीत गया । एक दिन रात को उसने लता पर शादी के लिए दवाब डालनेवाले उस आदमी को खा लिया । उसे इस बात पर तृप्ति हुई कि मैंने उसे खाकर अच्छा ही काम किया ।

लता की शादी की समस्या तात्कालिक रूप से मुल्तवी हो गयी । इतने में एक और महीना पूरा होने को आया । मनुष्यों के प्रति उसकी ममता बढ़ने लगी । किसी को भी खाने की उसकी इच्छा नहीं हो रही थी । आख़िर उसने एक दिन एक सन्यासी को पकड़ लिया । उसने सोचा कि सन्यासी का अपना कोई नहीं होता, इसलिए उसे खा भी जाऊँ तो किसी को खेद नहीं होगा ।

पर सन्यासी ने राक्षस से कहा ''पुत्र धर्मनंदन, तुम सन्मार्गी हो । मुझे खाना तुम्हारे लिए उचित नहीं होगा । मनुष्यों में अच्छाई को पनपाने के लिए मैं अपनी तरफ़ से पूरी कोशिश कर रहा हूँ । कष्टों में सलाह देकर कितने ही लोगों को मैंने सहायता पहुँचायी । मेरे ना होने से मानव जाति का नष्ट होगा । मुझे खाने से तुम्हें पाप लगेगा ।''

सन्यासी ने उसे नाम लेकर पुकारा,

बात करो'' कहकर लता चली गयी ।

धर्मनंदन, लता के माँ-बाप से मिला और अपने मन की इच्छा प्रकट की । उन्होंने उसके बारे में विवरण जानना चाहा । वह झूठ कहना नहीं चाहता था, किन्तु उसने सच्चाई छिपायी । जाति, गोत्र आदि से अपरिचित एक व्यक्ति से वे अपनी लड़की की शादी करने तैयार नहीं थे ।

मंदिर जाती हुई लता से वह एक और बार मिला । उसने लता से कहा ''अगर तुम्हें यह शादी मंज़ूर हो तो तुम्हारे माँ-बाप को बताये बिना ही हम कर लेंगे ।''

लता ने कहा ''ऐसा मुझसे नहीं हो सकता । अगर मेरा भाग्य अच्छा रहा तो

इसलिए उसके प्रति धर्मनंदन के हृदय में श्रद्धा उत्पन्न हुई । उसने, उसे सादर नमस्कार किया और उससे पूछा कि मुझे भी कोई अच्छी सलाह दीजिये । तब सन्यासी ने लता के दूर के रिश्तेदार का ज़िक्र किया । कहा "उसका नाम निर्वाक है । वह कोई कहने लायक़ संपन्न नहीं । उसकी पत्नी का नाम कात्यायनी है । उनकी कोई संतान नहीं हुई । मैंने उन्हें सलाह दी कि किसी लड़के को गोद लें । वे इस संबंध में किसी निर्णय पर आ नहीं पा रहे हैं ।"

सन्यासी ने उनका पूरा विवरण दिया और फिर धर्मनंदन से कहा "इसी नगर में वक्रबुद्धि नामक एक करोड़पति है । वह बड़ा ही झूठा आदमी है । बहुत-से लोगों को उसने धोखा दिया है । साधारण लोग उससे टक्कर लेने की ताक़त नहीं रखते । तुम तो शक्तिशाली हो, मायावी हो । एक दुकान खोलो, जहाँ ग़रीबों के लिए सस्ते दामों में सामग्रियाँ बेची जाएँ । सब लोग तुम्हें अच्छा आदमी मानेंगे और तुम्हारी प्रशंसा करेंगे । जब तुम अच्छा नाम कमा पाओगे तब जिस निर्वाक का ज़िक्र मैंने किया था, वह तुम्हें अवश्य ही गोद लेगा । इसके बाद कोई भी तुम्हारी जाति, कुल, गोत्र आदि की बात ही नहीं करेगा ।"
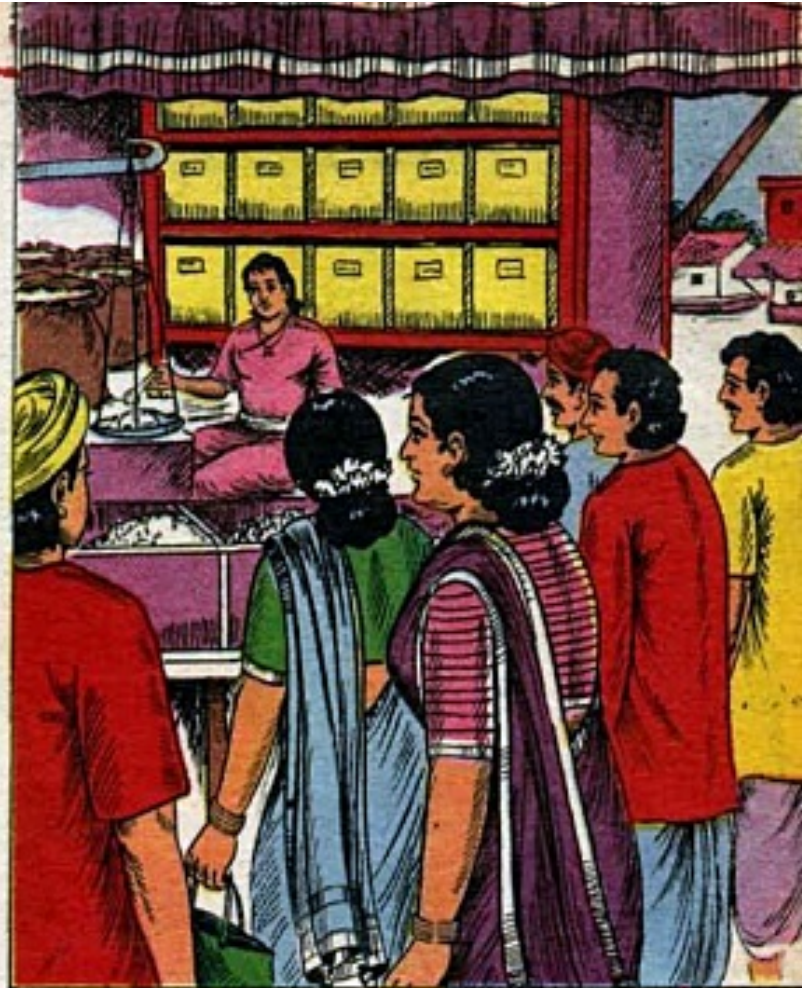
उस दिन रात को सन्यासी की सलाह के अनुसार धर्मनंदन ने सुस्त सोम को खा लिया । फिर एक ख़ाली जगह देखी और वहाँ एक सुंदर दुकान की सृष्टि की । सबेरे लोगों ने नयी दुकान देखी तो उसकी प्रशंसा करने लग गये । क्योंकि वह उन्हें बहुत ही आकर्षक लगा ।

धीरे-धीरे धर्मनंदन की दुकान में आनेवाले ग्राहकों की संख्या बढ़ती गयी । महीना पूरा हुआ, पर उसे खाने के लिए आदमी नहीं मिला । अपने आहार के बारे में भी धर्म-पथ पर चलनेवाले उस राक्षस की समझ में नहीं आया कि क्या किया जाए । इस बीच वक्रबुद्धि की नज़र
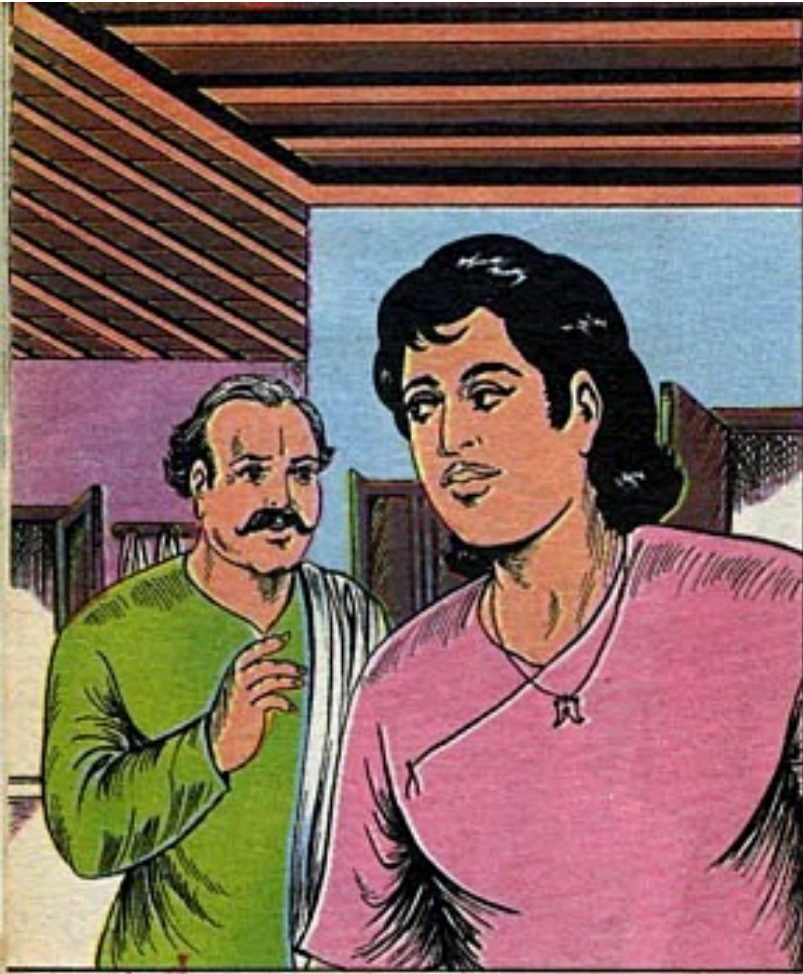
धर्मनंदन की दुकान पर पड़ी । उसने देखा कि दिन-व-दिन उस दुकान की वृद्धि हो रही है तो उसने धर्मनंदन को मार ड़ालने का निश्चय किया । गजबल नामक मल्लयोद्धा को इस काम पर लगाया । आदमी के इंतज़ार में ही बैठे धर्मनंदन के चंगुल में आप ही आप गजबल फँस गया और उसका आहार बन गया । यों धर्मनंदन के आहार की समस्या का परिष्कार हो गया ।

अब धर्मनंदन को अगले महीने के बारे में चिंता होने लगी । इस बीच निर्वाक उसके पास आया और बोला "तुम्हारे बारे में मैंने बहुत कुछ सुना है । मालूम हुआ है कि तुम्हारे अपने कोई नहीं हैं । तुम जैसे उदार व्यक्ति को गोद लूं तो मेरे वंश का उद्धार होगा । क्या तुम्हें यह स्वीकार है?" उसकी बातों से धर्मनंदन बहुत ही खुश हुआ और अपनी स्वीकृति दे दी ।

निर्वाक ने उसे शास्त्रोक्त गोद लिया ।

धर्मनंदन इसी सोच में लीन हो गया कि मेरा राक्षस-रूप अपनानेवाला कौन मानव मिलेगा । तब वहाँ अति क्रोधित वक्रबुद्धि आया और कहने लगा "दस हाथियों समान बलवान, बारह सिंहों के समान पराक्रमी, अपने सेवक गजबल को यहाँ भेजा था । उसका कोई पता-वता नहीं । नगर के प्रसिद्ध तांत्रिकों से पूछने पर मालूम हुआ कि कोई राक्षस छिपे-छिपे तुम्हारी मदद कर रहा है । उन्होने मंत्र-तंत्रों की सहायता से, होम व आवाहन करके इस सत्य को जाना है । बोलो, वह कहाँ है? उसे दिखाओ । पल भर में उसे भूमि में गाड़ दूँगा ।"

धर्मनंदन उसकी बातों पर ज़ोर से हँसता हुआ बोला "तुम्हारा जैसा नाम है, वैसा ही पाया । सौ फ़ी सदी तुम वक्रबुद्धि ही हो । राक्षस यहाँ क्यों रहेगा । वह रहेगा अपने राक्षस-राज्य में ।" उसने वक्रबुद्धि को राक्षस-राज्य के विवरण भी दिये ।

यह सुनकर वक्रबुद्धि बहुत ही खुश हुआ । वह कहने लगा "वाह, भाग्यवान को ही ऐसी जगह पर रहने का अवसर

मिलता है। एक बार, सिर्फ़ एक बार मुझे उस राज्य में भेजो।''

''भेज सकता हूँ। किन्तु ऐसा करने से मुझे भी कुछ ना कुछ लाभ होना चाहिये ना? अपनी पूरी जायदाद मेरे नाम कर दो। मैं तुम्हें समस्त शक्तियों से भरपूर बनाकर राक्षस-राज्य में भेजूँगा।'' धर्मनंदन ने कहा।

उसकी बातों को सुनते ही वक्रबुद्धि मन ही मन सोचने लगा ''राक्षस की समस्त शक्तियाँ मुझे उपलब्ध हो जाएँ तो जायदाद इससे आसानी से छीन लूँगा। राजा भी बन सकता हूँ। मेरे लिए कोई भी कार्य असाध्य नहीं होगा।'' इसलिए लालच में आकर उसने धर्मनंदन का कहा सब कुछ किया।

धर्मनंदन ने अपनी अंगूठी वक्रबुद्धि को पहनायी। बस, वह ग़ायब हो गया। इसके बाद धर्मनंदन सन्यासी से मिलकर बोला ''महाशय, आप तो सब कुछ जानते हैं। जो राक्षस-राज्य में प्रवेश करते हैं, उनका स्वभाव ही बदल जाता है। जब स्वभाव बदल जाता है, तब उनका राक्षस-राज्य से बाहर आने का सवाल ही नहीं उठता। पर हाँ, मेरी बात तो अलग है, क्योंकि राक्षस-राज्य में रहते हुए भी मेरी प्रवृत्ति ही दूसरे राक्षसों से बिल्कुल ही अलग थी। अब मेरी शक्तियाँ समाप्त हो गयी हैं। मैं राक्षस से मानव बन गया हूँ। वक्रबुद्धि की संपत्ति अब मेरे हाथ में आ गयी है। मैं यथावत् अपनी दूकान चला सकता हूँ और सामान्य जनता की सेवा व सहायता कर सकता हूँ। लता से शादी करके मानवों के बीच मानव की तरह सुख से जीवन बिता सकता हूँ।''

सन्यासी ने धर्मनंदन को आशीर्वाद दिया।

निर्वाक का वारिस बनकर धर्मनंदन ने लता से शादी की। उसके भाई को अपनी ही दुकान में नौकरी दी। लोग भी उस दुकान को राक्षस की दुकान के नाम से पुकारने लगे।

कमाई-बिना मेहनत के

शिवपुरी एक छोटा-सा शहर था। वहाँ किरण नामक एक युवक था। वह अपने को बहुत ही होशियार मानता था। वह सपने देखा करता था कि मेहनत कम करूँ और कमाऊँ ज़्यादा।

एक बार उसके घर के ताले की चाभी खो गयी। ताला खोलनेवाले कन्हैय्या नामक एक आदमी को बुला लाया। दो मिनटों में उसने नक़ली चाभी से ताला खोल दिया। उसने पाँच रुपयों की मज़दूरी की माँग की। किरण कर क्या सकता था। उसे पैसे देने ही पड़े। फिर वह सोचने लगा कि दो मिनिट काम किया कि नहीं, इसने पाँच रुपये वसूल किये। घंटे में कितने ही मिनिट होते हैं। यह तो पैसे कमाने का आसान तरीक़ा है। वह कन्हैय्या के पास गया और उससे, यह कला सिखाने के लिए कहा।

कन्हैय्या ने मान लिया और किरण को अपना शिष्य बना लिया। दो महीनों में सब कुछ सिखाने के बाद उसने किरण से कहा "किरण, इस पेशे में बेशुमार तक़लीफ़ें हैं। सावधान रहो।"

चार महीनों के अंदर किरण ने इस पेशे से बहुत-सा धन कमाया। एक दिन रात को दो आदमी उसके पास आये और बोले "हमारे महल की चाभी खो गयी। हमारे साथ आना और नक़ली चाभी से ताला खोलना। लो, ये दस रुपये।"

केशव खुश होता हुआ उनके साथ गया और महल का ताला खोल दिया। उधर से गुज़रते हुए दो पहरेदारों ने उनको देखा तो उन्हें संदेह हुआ। जब वे उनके नज़दीक आये, तो उन्होंने पहचान लिया कि इनमें से दो बहुत ही बदनाम चोर हैं। वे उन तीनों को कोतवाल के पास ले गये। केशव ने कोतवाल को सारी बातें बतायीं। कोतवाल नाराज़ होता हुआ केशव से बोला, "तुम्हें तो मालूम भी नहीं कि कौन चोर है और कौन मालिक ? तुम निरे मूर्ख हो। यह पेशा तेरे बस का नहीं।" कहकर पहरेदारों से उसे पिटवाया।

- रम्याकृष्णा

३

(ट्रोय की विजय-यात्रा के बाद स्वदेश निकला रूपधर तूफ़ान में फँस गया। एकनेत्रवाले फाललोचन राक्षसों के द्वीप में पहुँचा। अपने बारह साथियों के साथ फाललोचन की गुफ़ा में फँस गया। उस राक्षस ने उसके साथियों में से कुछ साथियों को ज़मीन पर पटक दिया और उन्हें मारकर उनकी हड्डियों तक खा गया। आख़िर रूपधर ने अपने बुद्धि-कौशल से उसे अंधा बना दिया और बचे साथियों सहित बाहर आ पाया। फिर उसकी नौकाएँ उस द्वीप को छोड़कर आगे बढ़ीं।)

रूपधर की नौकाएँ शीघ्र ही नौका द्वीप पर पहुँचीं। कहा जाता है कि वह द्वीप समुद्र-जल पर तैरता रहता है। चित्राश्व इस द्वीप का राजा है। इस द्वीप के ऊपर अभेध्य कांसे का क़िला है। दिग्पालक उस राजा के मित्र हैं। उसके तीन बेटे और तीन बेटियाँ हैं।

चित्राश्व ने रूपधर और उसके अनुचरों का स्वागत किया। उन्हें अपने अतिथि के रूप में एक महीने तक अपने ही क़िले में रखा। ट्रोय-युद्ध और उस युद्ध में विजयी ग्रीक योद्धाओं के बारे में उसने रूपधर से सारे विवरण जाने। पूरा महीना यों बातों में बीत गया।

एक दिन रूपधर ने चित्राश्व से कहा "हम बहुत दिनों तक आपके अतिथि बनकर रहे। हमें अब जाने की अनुमति दीजिये। साथ ही हमारी यात्रा सुखद और

सफल हो, इसके लिए हमें आपकी यथाशक्ति सहायता भी चाहिये। समुद्र की यात्रा में हम कई प्रकार के कष्ट भी झेल चुके हैं।''

चित्राश्व ने 'हाँ' कहा। सप्तवायु चित्राश्व के अधीन हैं। इसलिए एक वायु को छोड़कर शेष छे वायुवों को चमड़ी की एक थैली में बंद किया और उस थैली को रूपधर को देते हुए उसने कहा ''पुत्र, तुम्हारी नौकाओं को ये वायु सुरक्षित पहुँचायेंगे। ये वायु इस थैली में बंद हैं, इसलिए तुम्हारी यात्रा बेरोकटोक होगी। जब तक घर नहीं लौटोगो, तब तक तुम्हें सावधान रहना होगा कि थैली से ये वायु बाहर आ ना पावें। अगर ऐसा हुआ तो तुमपर कोई आपदा नहीं आयेगी।''

रूपधर ने राजा को अपनी कृतज्ञता व्यक्त की। थैली अपने ही पास सुरक्षित रखी। अपने अनुचरों के साथ नौकाओं में चल पड़ा। चित्राश्व ने जैसा कहा, वैसा ही हुआ। नौ दिन और नौ रातें बिना कहीं रुके सफलतापूर्वक यात्रा हुई। दसवें दिन समुद्र के उस पार इथाका का तट दिखायी पड़ा। उस तट पर उसने देखा भी कि सर्दी से बचने के लिए लोग आग जला रहे हैं।

स्वदेश देखकर रूपधर और उसके अनुचर आनंद से झूम उठे। थोड़े ही क्षणों में उनकी नौकाएँ तट पर पहुँचने ही वाली हैं। इस कल्पना मात्र से वे संतुष्ट हुए कि हम सब शीघ्र ही अपने-अपने घरों में रहेंगे।

नौका द्वीप को छोड़ने के बाद रूपधर ने नींद की हल्की सी झपकी भी नहीं ली। वायुओं की थैली को अपने ही हाथ में रखकर बड़ी जागरूकता के साथ उसकी रक्षा करता रहा। जब उसे पूरी तरह से आश्वासन हो गया कि घर पहुँचने ही वाले हैं तो नींद ने उसे अपनी लपेट में ले लिया। वह सब कुछ भूलकर अचेत मनुष्य की तरह नींद की गोद में चला गया। नौकाएँ तट पर पहुँचें, इसके पहले ही वह सो गया।

उसने आँखें बंद कीं कि नहीं, उसके

अनुचर आपस में कानाफूसी करने लगे। उन सबको लगा कि इस थैली में अवश्य ही हीरे, जवाहरात, अपार धन-राशि तथा मूल्यवान भेंटें होंगीं।

एक ने पूछा "उस थैली में क्या होगा?"

दूसरे ने कहा "और क्या होगा ? या तो सोना होगा अथवा बहुमूल्य भेंटें।" तीसरे ने कहा "रूपधर के अनगिनत दोस्त हैं। सब उसे ही भेंटें देते हैं। इसमें वे क़ीमती भेंटें होंगी।"

"हमें देनेवाला तो कोई है ही नहीं। उनकी दृष्टि में हम ठहरे, बेकार, निकम्मे।" तीसरे ने कहा। चौथे ने कहा "हम भी तो इसके साथ-साथ घर-बार छोड़कर दस साल भटकते रहे। पत्नी-संतान से दूर रहकर युद्ध करते रहे। अपनी जान पर खेल गये। देखो तो सही, इसने वहाँ जो लूटा, अकेला घर ले आ रहा है। और हम, हम तो खाली हाथ घर लौट रहे हैं। हमारी पत्नियाँ और संतान इस आशा में होंगीं कि लौटते हुए हम उनके लिए बहुत कुछ धन लायेंगे। लूट के माल के साथ-साथ रास्ते में बहुत-से उपहार भी इसे मिले हैं। हममें से किसी को भी इसने कुछ नहीं दिया।"

पाँचवें ने कहा "थैली खोलकर देखें तो सही, आख़िर इसमें है क्या ?" सब ने हाँ में हाँ मिलाया। थैली का मुँह चाँदी के तार से कसकर बंधा हुआ था। रूपधर के अनुचर बड़ी ही मुस्तैदी के साथ तार के एक-एक बाँध को खोल रहे थे।

बस, थैली के खुलते ही कालवायु भयंकर वेग व ध्वनि के साथ बाहर आ गये। उस वायु के कारण नौकाएँ डोलने लगीं। नौकाओं में जो आदमी थे, वे कटे पेड़ की तरह गिर गये। अपने मुखों को अपने हाथों में छिपा लिया।

उस प्रलय घोष से रूपधर नींद से जाग उठा। पर वह आँख खोल नहीं पाया। उस झंझामारुत के वेग के कम हो जाने के बाद रूपधर की नौकाएँ फिर नौका द्वीप के तट

पर पहुँचीं। रूपधर और उसके अनुचर ज़ोर-ज़ोर से रोने लगे। क्योंकि अभी-अभी आँखों के सामने उन्हें अपना देश जो दिखायी पड़ा, उससे वे फिर से दूर हो गये हैं। रूपधर की निराशा वर्णनातीत है। उसे अपने ग़लती महसूस हुई। चित्राश्व की बातों को भुलाकर उसने सबकी जान ख़तरे में ड़ाल दी।

पर, अब रोते रहने से क्या फ़ायदा। जो ग़ल्ती होनी नहीं थी, हो गयी। रूपधर और उसके अनुयायियों ने खाना पकाया और खाया। दो आदमियों को लेकर वह चित्राश्व के पास गया। आश्चर्य-भरित स्वर में चित्राश्व ने कहा "अपना देश सक्षेम लौटने के लिए मैंने तो तुम्हारी आवश्यक सहायता की। फिर लौट आना कैसे हुआ?"

"राजन्, मैं क्या और कैसे बताऊँ? ग़ल्ती से एक पल के लिए मैंने अपनी आँखें बंद कीं। मेरे इन बेवकूफ़ अनुचरों ने थैली खोली और वायु को स्वच्छंद छोड़ दिया। जैसे ही वे वायु बाहर आये, प्रलय मच गया। आप शक्तिशाली हैं। एक और बार मेरी सहायता कीजिये। आपका पुण्य होगा।"

"अरे पापी, तुम क्या कर बैठे? मेरे द्वीप को छोड़कर तुरंत चला जा। देवता तुम्हारा नाश करने पर तुले हुए हैं। मैं तुम्हारी मदद नहीं करूँगा।" चित्राश्व ने यों कहकर निर्दयता से उसे वहाँ से भगा दिया। रूपधर ने बहुत गिड़गिड़ाया, किन्तु कोई फ़ायदा नहीं हुआ।

नौकाएँ लौटने लगीं। पर किसी में भी

थोड़ा भी उत्साह नहीं रहा। हवा से कोई मदद नहीं पहुँच रही थी, इसलिए नाविकों को भरपूर शक्ति लगाकर डाँड चलाना पड़ा। विश्राम लिये बिना छे दिनों तक रात और दिन समुद्र में यात्रा करते रहे। रूपधर ने आख़िर एक विचित्र तट को देखा। वह उत्तरी ध्रुव प्रॉंत है। यहाँ महीनों भर दिन ही दिन होता है। सूर्यास्त के थोड़ी ही देर बाद सूर्योदय होता है। कहीं सूर्यास्त होता है, तो कहीं सूर्योदय जो, नये लोगों के अनुमान के बाहर है।

रूपधर की नौकाएँ जिस तट पर रुकीं, वहाँ पास ही दो पर्वतों के शिखर हैं। इनके बीच में से एक ही नौका गुज़र सकती है। उनमें से गुज़रें तो समुद्र, सरोवर के आकार में विशाल दीखता है; बंदरगाह लगता है। नौकाओं के ठहरने के लिए वह अच्छी जगह है। बाक़ी नौकाओं को रूपधर ने उस पार भेजा और अपनी नौका मात्र को तट पर के पहाड़ के पथ्थर से बाँध दी। वह फिर पहाड़ के शिखर पर चढ़ गया। उसपर चढ़कर उसने चारों ओर सरसरी नज़र दौड़ायी। समीप उसे कहीं भी हरियाली या कोई एक पेड़ भी दिखायी नहीं पड़ा। किन्तु उसने देखा कि आकाश में कहीं दूरी पर धुआँ उठ रहा है। उसने निश्चय किया कि वहाँ अवश्य ही मनुष्य रहते हैं। अपने अनुचरों में से तीन को वहाँ भेजते हुए उसने उनसे कहा "उस दिशा में तुम लोग जाओ, जहाँ से धुआँ
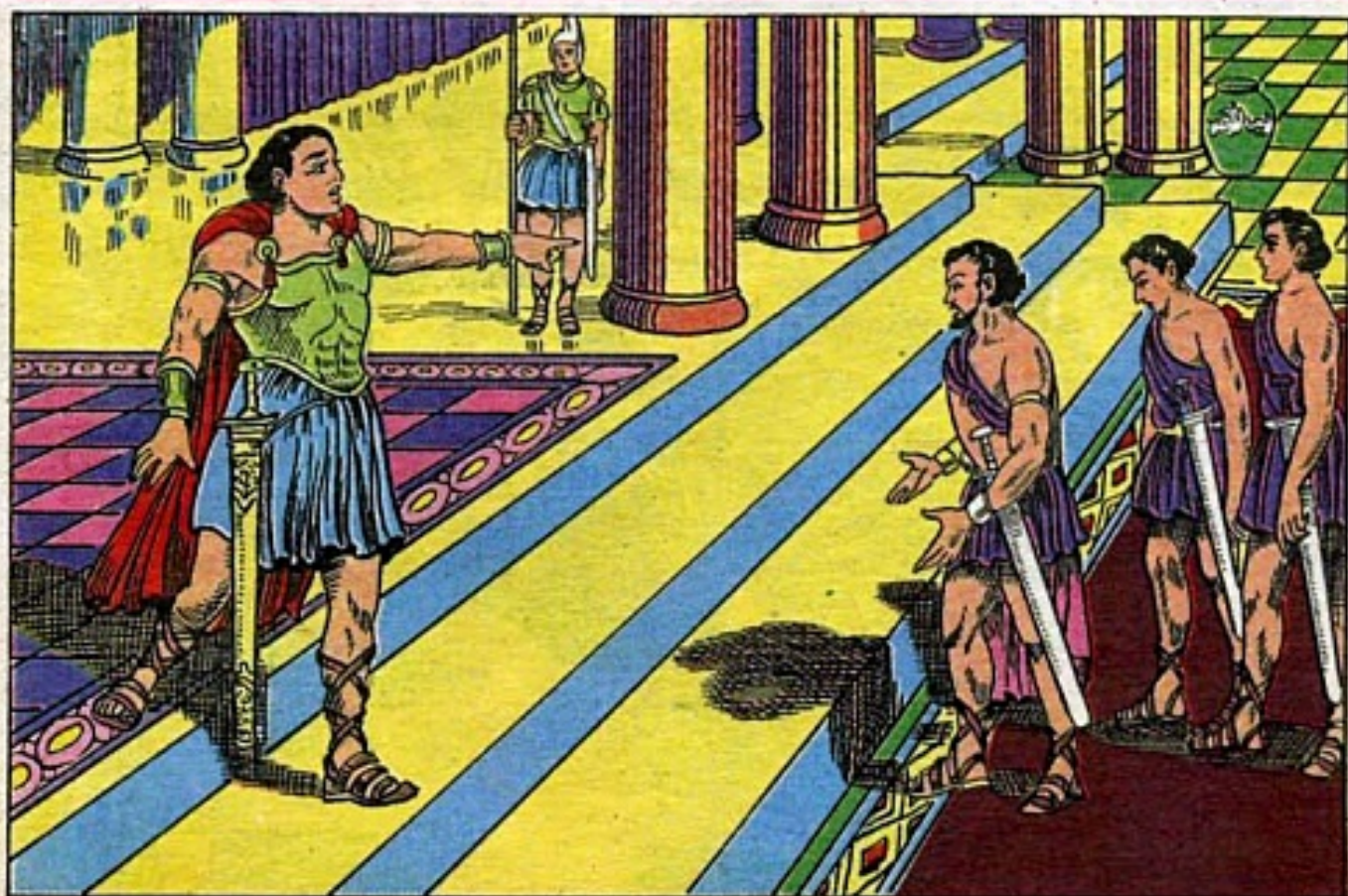
निकल रहा है। मालूम करके आओ कि किस प्रकार के लोग वहाँ बसे हैं।''

कुछ दूर जाने के बाद उन्हें एक पगडंडी दिखायी पड़ी। पगडंडी के दोनों तरफ़ घर भी हैं। उन घरों से थोड़ी दूरी पर, एक तालाब में, एक लड़की पानी भर रही है। रूपधर के अनुचरों ने उस लड़की से पूछा ''इस देश का राजा कौन है? वह कहाँ रहता है? हमें उससे मिलना है।'' लड़की ने इशारे से दूर पर स्थित एक घर की छत दिखायी।

जब उन्होंने उस घर में क़दम रखा तो उन्होंने देखा कि राक्षसी जैसी एक स्त्री बैठी हुई है। वह देखने में बड़ी विकृत है।

उस स्त्री ने तुरंत अपने पति को समाचार भिजवाया। उसने आते ही रूपधर के एक अनुचर को पकड़ लिया, उसे ज़मीन पर पटक दिया और मारकर उसे रसोईघर में फेंक दिया। बाक़ी दोनों ने यह भयंकर दृश्य देखा और वहाँ से भागकर नौकाओं के पास दौड़े हुए आये।

परंतु इतने में राक्षस गली में आ गया और ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगा। उसकी चिल्लाहट सुनकर हज़ारों राक्षस एक जगह पर इकट्ठे हो गये। बंदरगाह जैसी जगह के चारों ओर जो पहाड़ थे, उनपर चढ़ गये, और वहाँ से नौकाओं पर पथ्थर बरसाने लगे। वे भारी पथ्थर थे।

वहाँ रुकी सारी नौकाएँ टूट गयीं। रूपधर के अनुचर पथ्थरों के नीचे दब गये। चिल्लाते हुए राक्षस भी नीचे उतरे और उन्हें बर्छियों में चुभोकर अपने घर ले गये।

रूपधर ने देखा कि स्थिति बड़ी नाज़ुक है। उसे लगा कि यहाँ एक पल भी ठहरना खतरनाक है। उसने चाकू से रस्सी काट डाली और नाव में जो थे, उनसे चिल्लाकर कहा ''ज़ल्दी डाँड चलाओ। तेजी से जाओ, नहीं तो हमारे प्राणों की भी खैर नहीं।''

उन्होंने भी अपना पूरा बल लगाया और नाव को समुद्र में ले आये। अलावा इस नौका के, सब नौकाओं का नाश हो गया। उनमें जो ग्रीक थे, सब मर गये।

(सशेष)

'चन्दामामा' की ख़बरें

पिरामिड गृह

ईजप्ट की पिरामिडें संसार के सात आश्चर्यों में से एक है। बताया जाता है कि राज-परिवारों के सदस्यों के भौतिक शरीरों को सुरक्षित रखने के लिए इनका निर्माण हुआ था। ये हजारों सालों पहले निर्मित हुए थे। इनकी विलक्षण निर्माण-पद्धति ने वर्तमान वास्तु-निपुणों को बहुत ही आकर्षित किया है। इनका निचला भाग चार प्राकारों पर है तो ऊपरी
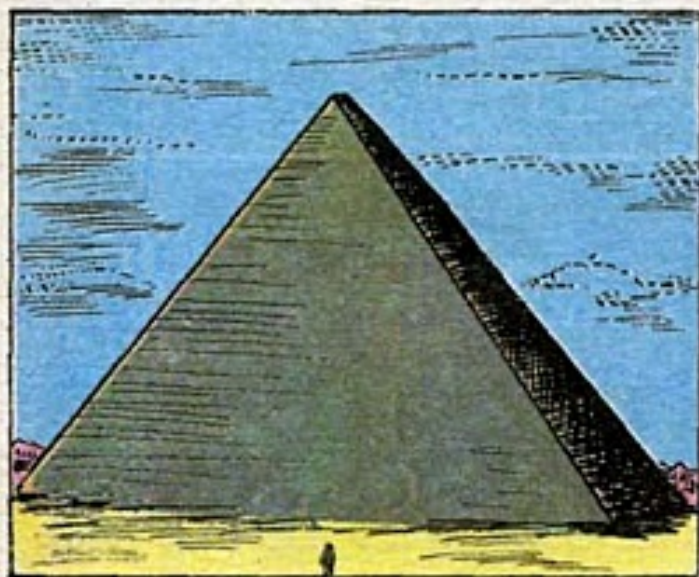
भाग त्रिभुजाकार के कुड्यों के साथ कुछ अलग ही प्रकार का दिखता है।

इन पिरामिडों में भौतिक देहों की सुरक्षा तो होती ही है, साथ ही यहाँ सुरक्षित इतर वस्तुएँ भी बिगड़े बिना सुरक्षित रहती हैं। वास्तु-शास्त्र के कुछ निपुणों का मानना है कि पिरामिड के आकार में बने पुट्ठे के झाबों में फल, तरकारी खराब हुए बिना रखे जा सकते हैं। कुछ लोगों का यह भी मानना है कि पिरामिड के आकार में बने घरों में हम तंदुरुस्त रह सकते हैं। आगे जाकर पिरामिड गृह बनने लगें तो आश्चर्य की कोई बात नहीं।

ऊँचा भवन

जापान के गृह-निर्माण संबंधी ३७ निपुणों ने चीन के शंघाय नगर में एक भवन के निर्माण का निश्चय किया, जिसकी ऊँचाई होगी ४७० मीटर। यह भवन ९५ मंज़िलों का होगा। मलेशिया में एक भवन का निर्माण-कार्य चल रहा है। इसकी ऊँचाई होगी ४५२ मीटर। अमेरीका के चिकागो नगर में ४४३ मीटर की ऊँचाई वाले एक भवन का निर्माण-कार्य चल रहा है। शंघाय में बन रहा यह भवन उक्त दोनों भवनों से ऊँचा है। ८८२ लक्ष डालरों का व्यय करके बनाये जानेवाले इस भवन का निर्माण पाँच-छे सालों में पूरा हो जायेगा।

दंत शिखर

शंघाय के दंत-वैद्य याकीन तथा उनके छे विद्यार्थी पिछले ३० वर्षों से अपने रोगियों के खराब दाँत उखाड़ते आ रहे हैं। इन्होंने क़रीबन १८,००० दाँतों को उखाड़ा है, किन्तु इन्हें फेंक नहीं दिया। इन्हें सुरक्षित रखा और कुछ प्रकार के गोंदों का उपयोग करके दो मीटरों की ऊँचाई का शिखर बनाया। दुनिया के रिकार्ड्स में इसे दर्ज करने के लिए तत्संबंधी अधिकारी स्वयं आये और देखकर गये।

रबड़ का बाँध

मध्य चीन के हेटान प्राँत के नानयांग शहर में पाँच सौ मीटर लंबा और ३.५ मीटर ऊँचा एक बाँध रबड़ से बाँधा जा रहा है। उनका कहना है कि हवा अथवा पानी से भरी हुई रबड़ की थैलियाँ पथ्थर और सिमेंट से सस्ती व दृढ़ होती हैं।

देशभक्ति

धुन का पक्का विक्रमार्क पुनः पेड़ के पास गया। पेड़ से शव को उतारा और कंधे पर डाल लिया। मौन श्मशान की ओर बढ़ता चला गया। तब शव के अंदर के बेताल ने उससे कहा "डरावने इस श्मशान में आधी रात के समय कठोर परिश्रम कर रहे हो। मेरी समझ में नहीं आता कि इतना कठोर परिश्रम करने के बाद भी आख़िर तुमने पाया भी क्या ? मेरा तो अभिप्राय है कि तुम कुछ भी पा नहीं सके। कोई भी लक्ष्य साध नहीं सके। मेरी तो निश्चित राय है कि यह सब कुछ तुम अपनी भलाई के लिए नहीं कर रहे हो। ये कार्य स्वबुद्धि से प्रेरित कार्य नहीं हैं। मैं तो समझता हूँ कि किसी के प्रति तुम्हारा अपार आदर है और इस आदर की भावना के वशीभूत होकर उसके स्वार्थ के लिए तुम यह सब कुछ करने तुल गये हो। तुम एक देश के राजा हो ; शासन-दक्ष हो; अनुभवी हो; लोकज्ञानी हों, भले आदमी हो, इसमें मुझे रत्ती

बैताल कथा

भर भी संदेह नहीं। तुम्हें तो मालूम ही होगा कि कभी-कभी महाज्ञानी और विवेकी भी क्षणिक बलहीनताओं के चंगुल में फँसकर अपना ज्ञान और विवेक खो बैठते हैं। उदाहरण के लिए सुमनस्पति नामक एक राजगुरु की कहानी तुम्हें सुनाऊँगा। थकावट दूर करते जाओ और उसकी कहानी ध्यान से सुनो।'' बेताल सुमनस्पति की कहानी यों सुनाने लगा।

श्वेतदीप के शासक को लंबे अर्से के बाद एक बेटा पैदा हुआ। राजदंपति उसे बड़े प्यार से पालने लगे। अपने छठवें साल के जन्म-दिन पर बच्चा खेलने उद्यानवन में गया। फिर वह दिखायी ही नहीं पड़ा। सैनिकों ने बहुत ढूँढ़ा, पर कोई फ़ायदा नहीं हुआ।

श्वेतद्वीप का पड़ोसी राज्य था हरित द्वीप। बहुत ही लंबे अर्से से उन दोनों राज्यों में कट्टर शत्रुता थी। चूँकि दोनों राज्य समान रूप से बलवान और शक्तिशाली थे, इसलिए दोनों ने एक-दूसरे के देश पर आक्रमण करने की चेष्टा नहीं की। जब राजकुमार दिखायी नहीं पड़ा तो पहले पहल राजा को संदेह हुआ हरित द्वीप के राजा पर। इसके दूसरे ही दिन उस द्वीप का राजगुरु सुमनस्पति श्वेतद्वीप के समुद्री तट पर पकड़ा गया। इससे राजा का संदेह और दृढ़ हो गया।

सुमनस्पति ज्ञानी और विवेकी था। उसने लौकिक विद्याओं में पर्याप्त ज्ञान पाया। यही नहीं, वह तांत्रिक शास्त्र में भी निष्णात था। पशु-पक्षियों की भाषा तथा उनके व्यवहार से वह सुपरिचित था। हरित द्वीप के राजकुमार का राज्याभिषेक ठीक छे महीनों के बाद संपन्न होनेवाला है। सुमनस्पति उस संबंध में निमंत्रण-पत्रों को स्वयं लेकर विविध राज्यों के राजाओं तथा प्रमुखों को बाँटने निकला। उस समय उसकी नौका तूफ़ान में फँस गयी और श्वेतद्वीप के तट पर पहुँची।

श्वेतद्वीप के राजा ने, बंदी सुमनस्पति से विविध प्रश्न किये। उसके उत्तरों से वह समझ गया कि उसे, उसके बेटे के अपहरण का समाचार मालूम नहीं है। फिर भी राजा ने उसे छोड़ नहीं दिया। चूँकि सुमनस्पति सकल विद्याओं में पारंगत था, इसलिए राजा ने अपने

बेटे को ढूंढ़ने और यह जानने का भार उसे सौंपा कि वह कहाँ हो सकता है।

सुमनस्पति की समझ में नहीं आया कि राजकुमार कहाँ होगा और उसका कैसे पता लगाया जाए। उसे मालूम था कि अगर वह यह कार्य नहीं कर पायेगा तो शाश्वत रूप से इसी राज्य में उसे अस्वतंत्र होकर रहना पड़ेगा। क़िले के बुर्ज़ पर विचरते हुए इसी के बारे में वह सोचने लगा। तब उसने देखा कि बड़े आकार का एक गिद्ध समुद्र की तरफ़ से क़िले की ही ओर आ रहा है। सुमनस्पति ध्यान से उसे देखता रहा। अपनी तर्जनी को उठाकर हवा में घुमाता रहा और उच्च गति में आधे मिनिट तक सीटी बजाता रहा। गिद्ध ने मानों बात समझ ली हो, क़िले के चारों ओर चार-पाँच बार घूमता रहा और वेग से उतरकर बाग़ के एक बरगद के पेड़ की शाखा पर आ बैठा। दूसरे ही क्षण पेड़ की टहनियों में बैठे पक्षी-गण कलरव करने लगे।

सुमनस्पति ने तृप्ति से अपना सर हिलाया मानों बात उसकी समझ में आ गयी। क़िले के बुर्ज़ से उतरकर वह बाग़ में आया। फ़ौरन पक्षियों का कलरव बंद हो गया। बरगद पेड की एक टहनी पर मैना का घोंसला था। वह सुमनस्पति की ओर उड़कर आयी और कलरव करती हुई वृक्ष के तने के पास की कोटर के समीप आ उतरी। वह वहाँ उतरकर किचकिच करने लगी। यह देखकर सुमनस्पति बहुत ही खुश हुआ और वह भी कोटर के पास आया। बाहर से वह कोटर छोटा दीख रहा था, पर असल में था बड़ा। एक आदमी पेट के बल रेंगता हुआ अंदर घुस सकता था। किन्तु वृक्ष के अधिक भाग को वहाँ उपजे बेकार पौधों ने ढ़क दिया।

सुमनस्पति पेड़ के कोटर में घुसा और कुछ फुटों तक अंदर गया। वहाँ जाने पर उसने नीचे की ज़मीन पर देखा कि वहाँ चार-पाँच फुट की लंबी शहद की एक शीशी और उसपर तैरती हुई एक गेंद दिखायी पड़ी। राजकुमार जब बाग़ में खेल रहा था, तब वह गेंद पेड़ के कोटर में जा गिरी। उसको ढूंढ़ता हुआ वह अंदर गया और शीशे पर चढ़ गया। वह अपने को संभाल नहीं पाया और अकस्मात् वह शीशे

में जा गिरा और डूब गया।

सुमनस्पति ने यह विषाद-पूर्ण समाचार राजा को पहुँचाया। राजा ने राजकुमार को शीशे से बाहर निकलवाया। उस शीशे में हवा और रोशनी पहुँच नहीं सकती थीं, इसलिए राजकुमार के शरीर में किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं आया। राजा ने उसे राजोचित वस्त्र पहनवाये और बरगद के वृक्ष के समीप ही के पहरेदार की झोंपड़ी में, सोने की पलंग मंगाकर, उसे उसपर लिटाया।

इसके बाद राजा ने सुमनस्पति से कहा "हम जो काम नहीं कर पाये, उसे आपने बड़ी सुगमता से पूरा किया। आप बड़े ही शक्ति-संपन्न पुरुष हैं। यह हमारा दुर्भाग्य है कि हमारा पुत्र प्राणहीन हो गया। अब उसमें प्राण फूँकने की शक्ति भी केवल आप ही रखते हैं। यह आप ही से संभव है।"

"असंभव" कहता हुआ राजगुरु ने राजा को क्रोध-भरी आँखों से देखा। फिर कहा "जीवन और मृत्यु मनुष्य के लिए सहज हैं। मृत्यु से मैं भी बच नहीं सकता। कोई भी चिरंजीवी नहीं रह सकता। मुझमें ऐसी शक्ति कहाँ कि मैं किसी और को जीवन-दान दूँ।"

"मैं तो जानता नहीं हूँ कि आप क्या कर सकते हैं और क्या नहीं कर सकते। जब तक आप मेरे पुत्र को जीवन-दान नहीं देंगे तब तक आप इस बाग़ से बाहर नहीं जा सकते। चारों और सैनिक तैनात हैं। आपने भागने की कोशिश की तो उसी झोंपड़ी में आपको भी क़ैद करके रखूँगा, जहाँ मेरे मृत बेटे का शरीर रखा हुआ हैं।" कहकर राजा वहाँ से चला गया।

राजा के अज्ञान तथा स्वार्थपूरित प्रवृत्ति पर चिंतित होता हुआ सुमनस्पति वहाँ पड़ी एक शिला पर बैठ गया। इतने में दो बंदर एक दूसरे का पीछा करते हुए उस बाग़ में आये। देखते-देखते दोनों पेड़ की एक टहनी पेर चढ़ बैठे। एक दो मिनिटों के अंदर ही एक बंदर किचकिच की करुणा से भरी ध्वनि करता हुआ ज़मीन पर आ गिरा। टहनी पर जो काला साँप था, उसे ड़स लिया और वह अचेत होकर नीचे आ गिरा।

इतने में दूसरा बंदर नीचे उतरा और अचेत पड़े हुए उस बंदर के पास आ बैठा। उसकी

परीक्षा की। फिर वह टहनियों से लिपटे उस काले साँप को क्रोध से देखता रहा। उसने ज़मीन पर ज़ोर से अपने हाथ पटके और एक ही छलांग में वहाँ से कूदकर दौड़ पडा।

गौर से यह सब कुछ देख रहा था सुमनस्पति। उसके ओठों पर मुस्कान की एक रेखा खिंच गयी। वह शिला से उठकर इधर-उधर टहलने लगा।

एक घंटे के अंदर, जो बंदर दौड़कर गया था, वापस आया। वह ज़मीन पर अचेत पड़े बंदर के पास आया। अब उसके हाथ में पाँच-छह फुट की एक जड़ी-बूटी थी, जिसका आकार भी साँप ही की तरह था। बंदर ने अचेत पड़े उस बंदर के सिर पर उसे रखा और सिर्फ़ तीन बार ज़ोर से फूँका। बस, अचेत बंदर ने आँखें खोलीं और अपने बदन को सहलाता हुआ उठ बैठा। लग रहा था, मानों अभी-अभी नींद से जगा हो।

सुमनस्पति उन बंदरों के पास आया। चुटकी बजायी और हुंकार भरते हुए उनकी ओर देखता रहा। दोनों बंदरों ने एक-दूसरे को देखा। काँपते हुए उन दोनों ने उस जड़ी-बूटी को उसके हाथ में रख दिया। पलट-पलटकर उसे देखते हुए वे वहाँ से चले गये।

सुमनस्पति ने उस जड़ी-बूटी को राजकुमार के सिर पर रखा। तीन बार ज़ोर से फूँका। दूसरे ही क्षण राजकुमार जाग उठा। लगता था, मानों अभी-अभी नींद से जगा हो। सुमनस्पति ने पहरेदारों से बताया कि राजा को यह शुभ समाचार पहुँचाओ।

इस समाचार को सुनते ही राजदंपतियों की

खुशी का ठिकाना ना रहा। बाग़ में आकर उन्होंने पुत्र को आलिंगन में लिया। राजा ने सुमनस्पति को अपार धन दिया और फिर बड़े वैभव से उसका आदर-सत्कार किया।

सुमनस्पति ने राजा से कहा "मुझे धन नहीं चाहिये। कृपया शीघ्र ही मुझे अपना राज्य भेजने का प्रबंध कीजिये। अपनी पत्नी, संतान तथा बंधुजनों को देखने के लिए तड़प रहा हूँ।"
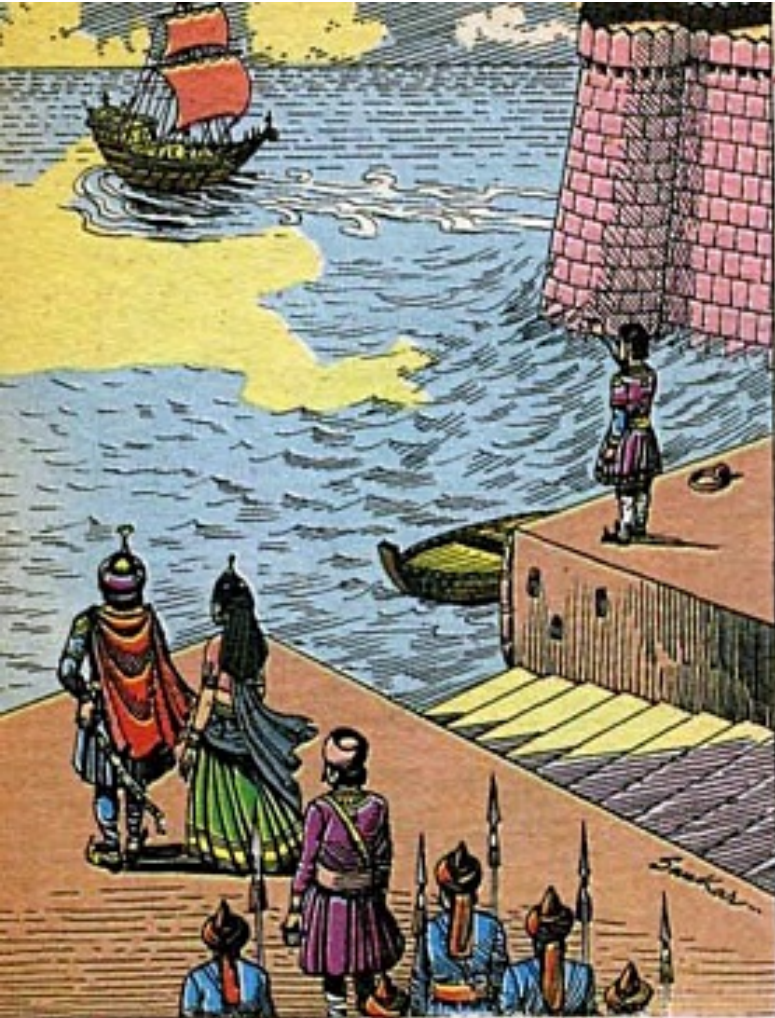
राजा ने अपनी स्वीकृति देते हुए कहा "पर आपकी यात्रा इतनी जल्दी नहीं होगी। आप ही ने ढूँढ निकाला था कि राजकुमार कहाँ है। आप ही ने उसे प्राण-दान भी दिया। आप ही को उसे विद्याएँ सिखानी होंगीं। आप जो-जो विद्याएँ जानते हैं, उन्हें राजकुमार को सिखाइये। फिर आपको आपके राज्य में भेजने का आवश्यक प्रबंध करूँगा।" कहता हुआ, सुमनस्पति के उत्तर की प्रतीक्षा ना करते हुए वहाँ से चला गया। राजा की बातों से सुमनस्पति के मन को बड़ा धक्का लगा। उसे राजा की आज्ञा का पालन करने के अलावा और कोई चारा भी दिखायी नहीं पड़ा। उसने राजकुमार को अपने शिष्य के रूप में स्वीकार किया और उसे जो-जो विद्याएँ मालूम थीं, सिखायीं।

राजकुमार तीक्षण बुद्धि का था, इसलिए उसने शीघ्र ही समस्त विद्याएँ सीख लीं। सुमनस्पति को जब विश्वास हो गया कि राजकुमार उसी की तरह विद्याओं में पारंगत हो गया है, तो उसने भरी सभा में उसकी परीक्षा ली। राजकुमार के बुद्धि-कौशल पर सभी सभासद आश्चर्य में डूब गये।

दूसरे ही दिन राजा ने सुमनस्पति की यात्रा के लिए एक नौका का प्रबंध किया। नौका को अमूल्य भेंटों से भर दिया। बिदा करने अपने पिता के ही साथ आये हुए राजकुमार से सुमनस्पति ने कहा "तुम्हें एक मंत्र सिखाना मैं भूल ही गया, जिसे मैं जानता हूँ। मंत्र का जप करते हुए हथेली में पानी लो और मेरी हथेली में उस पानी को डालो। फिर तब तक अपना मुँह ना खोलना, जब तक मेरी नौका तुम्हारी आँखों से ओझल ना हो।" कहते हुए उसने उसके कान में एक मंत्र को उच्चरित किया। गुरु

के कहे अनुसार ही राजकुमार ने किया। अंत:पुर पहुँचने के बाद गुरु के बताये हुए मंत्र को पिता को बताने के उद्देश्य से राजकुमार ने अपना मुँह खोला। किन्तु वह मंत्र उसे याद नहीं आया। यही नहीं, जो भी विद्याएँ उसने अपने गुरु से सीखीं, सब भूल गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर विक्रमार्क से कहा ''मुझे लगता है कि राजगुरु सुमनस्पति ने बड़ी ही नीचता से व्यवहार किया। श्वेतद्वीप के राजकुमार को प्राण-दान दिया और उसे समस्त विद्याएँ सिखायीं, सुमनस्पति ने ही। किन्तु, उसी सुमनस्पति ने नये मंत्र को सिखाने का बहाना बनाकर उसे धोखा दिया, दग़ाबाज़ी की। उसने क्यों सिखायी हुई अपनी समस्त विद्याओं का उपसंहार किया? ऐसा मंत्र क्यों सिखलाया, जिससे वह सब कुछ भूल जाए? क्या इस ईर्ष्या से कि कहीं वह उससे अधिक विद्या-संपन्न होगा, नहीं तो क्या इस भय से कि भविष्य में उससे अपना अहित होगा? सुमनस्पति महाज्ञानी है। ऐसा नीच काम करके क्या उसने अपने ज्ञान व विवेक को कलंकित नहीं किया? मेरे इन संदेहों के उत्तर जानकर भी चुप रह गये तो तुम्हारा सिर टुकड़ों में फट जायेगा।''

विक्रमार्क ने उत्तर में कहा ''हरितद्वीप के राजगुरु सुमनस्पति के हृदय में श्वेतद्वीप के राजकुमार के लिए विशेष प्रेम के होने की कोई संभावना नहीं। राजा ने ज़बरदस्ती की, उसपर दबाव डाला। अपने को केवल मुक्त करने के उद्देश्य से ही उसने राजकुमार को विद्याएँ सिखायीं। शत्रु देश के राजकुमार को विद्याएँ सिखाना देशद्रोह है। मेरी दृष्टि में यही देशभक्ति है। व्यक्ति, परिवार, समाज, देश नामक वलयों में, परिधियों में, व्यक्ति का वलय बहुत ही लघु है। देश, व्यक्ति से महान है। देश के श्रेय को दृष्टि में रखते हुए सुमनस्पति ने जो काम किया, वह न्याय-संगत है। यह कहना अन्याय होगा कि उसने ऐसा करके अपने ज्ञान और विवेक को कलंकित किया'' इस प्रकार बेताल राजा का मौन-भंग करने में सफल हुआ। वह शव सहित अदृश्य हो गया।

आधार - वरलक्ष्मी की रचना

व्यापारी का संदेह

श्यामपुर गाँव का मुन्सिफ़ शहर जाकर अपना सारा काम समाप्त करने के बाद, अपने घोड़े पर बैठकर गाँव की तरफ़ जाने लगा। रास्ते में वह एक तालाब के पास रुक गया। घोड़े ने पानी पी लिया। तब वह एक पेड़ के साये में विश्राम करने लगा। जब वह निकलने के लिए घोड़े के पास आया, तब उसने देखा कि धान का व्यापारी गुप्ता घोड़े पर उसी तरफ़ आ रहा है।

मुन्सिफ़ मितभाषी था तो गुप्ता वाचाल। उसके साथ-साथ जाना उसे बिल्कुल पसंद नहीं था। उसकी समझ में नहीं आया कि इससे कैसे बचूं। इसलिए रास्ते में मुन्सिफ़ चुप ही रहा। पर, गुप्ता बताते जाने लगा कि हाट में उसे कितना मुनाफ़ा हुआ है और धान को अलग-अलग दामों में कैसे बेच सका। मुन्सिफ़ चुपचाप उसकी बातों को सुनता रहा और अचानक उसे बिजली की तरह एक उपाय सूझा, जिससे गुप्ता का मुँह बंद हो जाए।

"गुप्ता! मुझसे बाजी लगाओगे। जब तक हम अपने गाँव के रामालय तक नहीं पहुँचते, तब तक हमें अपने मन ही में राम नाम का स्मरण करना होगा। तुम बिना बोले बाजी जीत जाओगे तो मैं तुम्हें अपना घोड़ा दे दूँगा।" मुन्सिफ़ ने कहा।

"सिर्फ़ बात इतनी ही है? इस पल से मुँह सीके चलूँगा। चलो" गुप्ता ने कहकर मौन धारण कर लिया।

इस प्रकार मुन्सिफ़ और गुप्ता मौन धारण करके गाँव की सरहदों तक आये।

इतने में गुप्ता को हठात् एक संदेह हुआ। उसने पूछा "केवल घोड़ा ही दोगे या घोड़े पर कसा जो जीन है, उसे भी दोगे?"

-तमन्ना

दक्कन के मज़बूत क़िले

रचना : मीरा उग्रा ◆ चित्र : अमिता चवान

तेरहवीं शताब्दी में मार्कोपोलो हमारा देश देखने आये। उस समय दक्षिण भारत में काकतीय साम्राज्य उन्नत स्थिति में था। उसकी राजधानी थी वरंगल। क़िले से घिरे वरंगल नगर की उन्होंने भरपूर प्रशंसा की और उसका विशद वर्णन किया। रानी रुद्रमदेवी ने बाहर का प्राकार बनवाया और उस क़िले को और मज़बूत किया।

मांकल शहर श्रेष्ठ हीरों के लिए सुप्रसिद्ध था। उसी शहर के समीप, रानी रुद्रमदेवी ने एक और क़िला बनवाया। १५१८ में, कुतुब-उल-मुल्क सुल्तान कुली ने मांकल में कुतुब शाही वंश की स्थापना की। उसने पुराने क़िले की मरम्मत करवायी। साथ ही नयी इमारतें बनवायीं। उसका नाम रखा गोलकोंडा।

गोलकोंडा की बहुत ही विशिष्टताएँ हैं। चार सौ फुट की ऊँचाई पर पर्वत है। उस ऊँचाई से पहाड़ के निचले भाग तक संकेत भेजने के लिए अद्‌भुत प्रबंध किये गये थे। एक किनारे से दूसरे किनारे तक की जानेवाली ध्वनि क्षण भर में सुनायी पड़ती थी। पहाड़ के ऊपर, जो पहरेदार होते थे, वे जैसे ही शत्रुओं के आने की सूचना तालियाँ बजाकर देते थे, वैसे ही पहाड़ के नीचे तैनात द्वारपालक दरवाज़ें बंद कर देते थे। मिट्टी की नलियों से पानी भेजा जाता था। ये नलियाँ दीवार से सटी हुई होतीं थीं। यह इस क़िले की विशिष्टता थी। प्रधान प्रासाद बालाहिसार, कड़ी धूप के दिनों में भी ठंडा होता था। इसका निर्माण ही इस प्रकार किया गया था।

गोलकोंडा का क़िला
राजप्रासाद पहाड़ के ऊपर है।
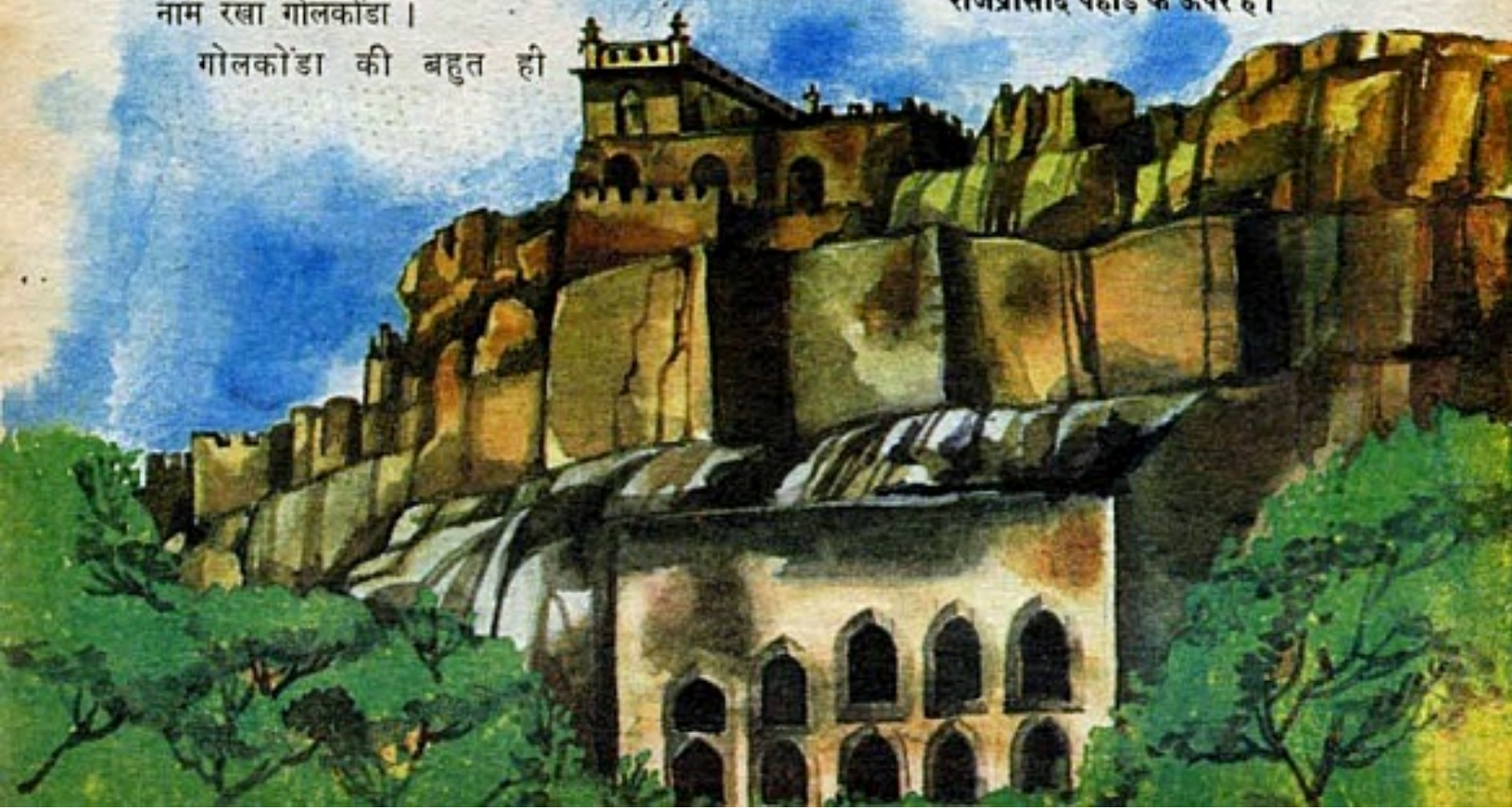
किले में जल की सुविधाएँ पर्याप्त मात्रा में थीं। किले के अंदर ही फ़सलें उगायी जाती थीं। इस कारण, किसी भी प्रकार के आक्रमण का सामना व सहने की शक्ति इस क़िले में थी। १६८७ में मुग़ल सेनाओं ने इस क़िले को घेरा। एक दिन रात को घनघोर अंधकार में एक शत्रु सैनिक ने क़िले की दीवार पर चढ़ने की कोशिश की। उसे देखकर कुत्ता भोंक पड़ा। पहरेदारों को जैसे ही यह बात मालूम हुई, उन्होंने वहाँ से सीढ़ी हटा दीं। बस, शत्रु सैनिक खाई में गिर गया और मर गया। सही समय पर भोंकनेवाले उस कुत्ते के गले को रत्न-खचित सुवर्ण हार से सजाया। इस घटना के चार महीनों के बाद किले के ही एक अधिकारी के षड्यंत्र की वजह से क़िला शत्रुओं
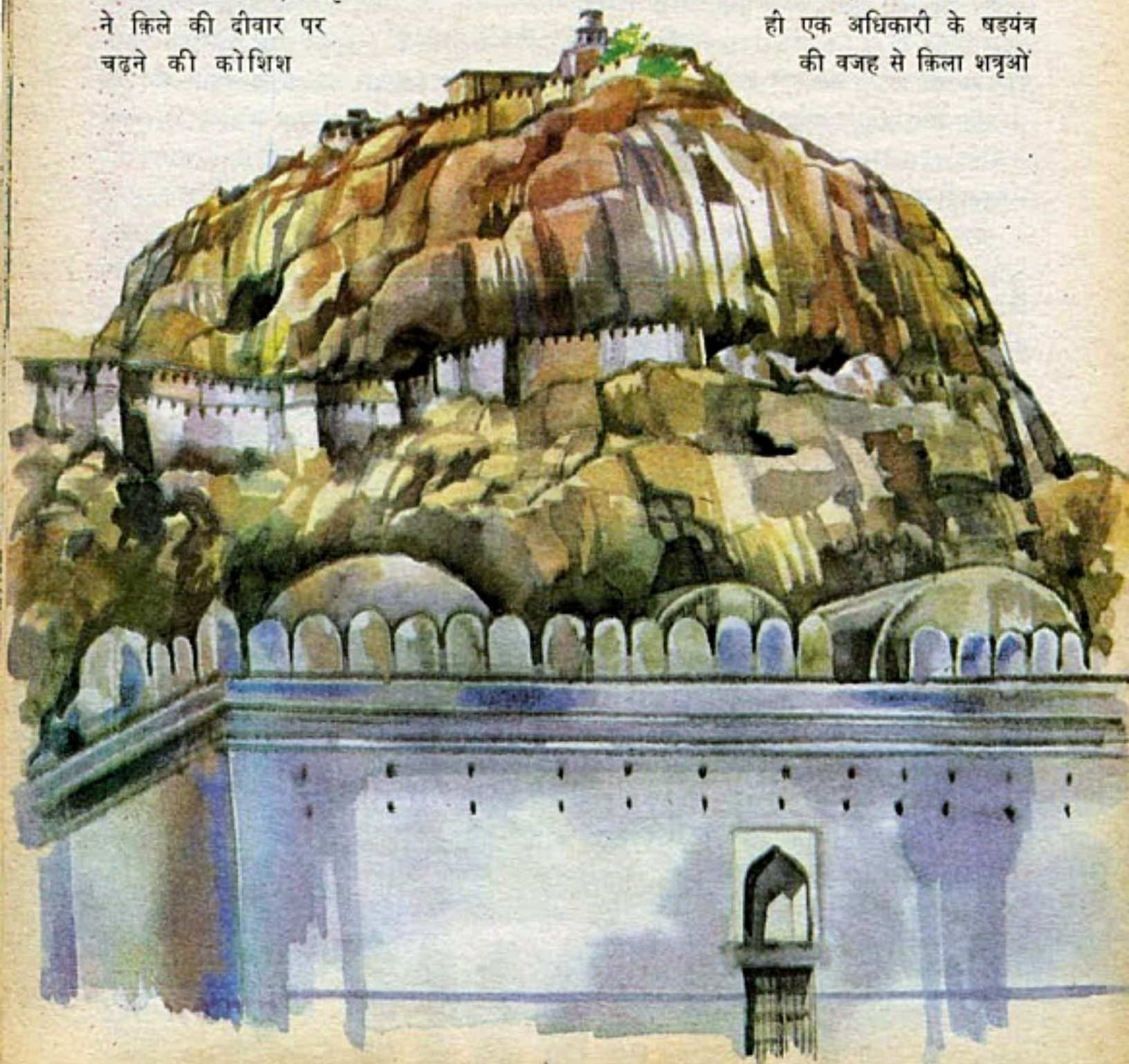
के अधीन हो गया। किले के पूर्व और उत्तर के बीच की चहारदीवारी के पास मुगलों ने किले को बढ़ाया और वृत्ताकार में विलक्षण तीन रक्षण-रथावरों का निर्माण किया। गोलकोंडा के शासक निजाम उल-मुल्क के नाम से पुकारे जाते थे।

सुप्रसिद्ध हीरा 'कोहिनूर' गोलकोंडा के समीप के हीरों की खानों में ही प्राप्त हुआ।

दक्षिण भारत के अति प्राचीन किलों में से मुख्य क़िला है -जिंजी। त्रिभुजआकारवाले पर्वतपर यह विस्तरित है। ई.पू. तीसरी शताब्दी से इसका इतिहास शुरु होता है। सोते तथा तालाबों से मिट्टी की नलियों के द्वारा पानी का संभरण होता था। इस दुर्भेद्य क़िले को मुगल आठ सालों तक घेरे रहे, तभी वे इसे अपने काबू में ले आ पाये।

विजयनगर के राजाओं ने यूरोप के वास्तुनिपुणों की सहायता से वेल्लूर क़िले का निर्माण किया। अद्‌भुत जुड़वी चहारदीवारी से सटकर, जो गहरी व विशाल खाइयाँ थीं, उनमें असंख्य मगर-मच्छ विचरते थे।

१८५७ में सिपाहियों का विद्रोह हुआ। इस सुप्रसिद्ध विद्रोह के पूर्व ही याने १८०६ जुलाई में, वेल्लूर के क़िले में एक

जिंजी क़िले की दायीं ओर महल रानियों का भवन कल्याण महल है।
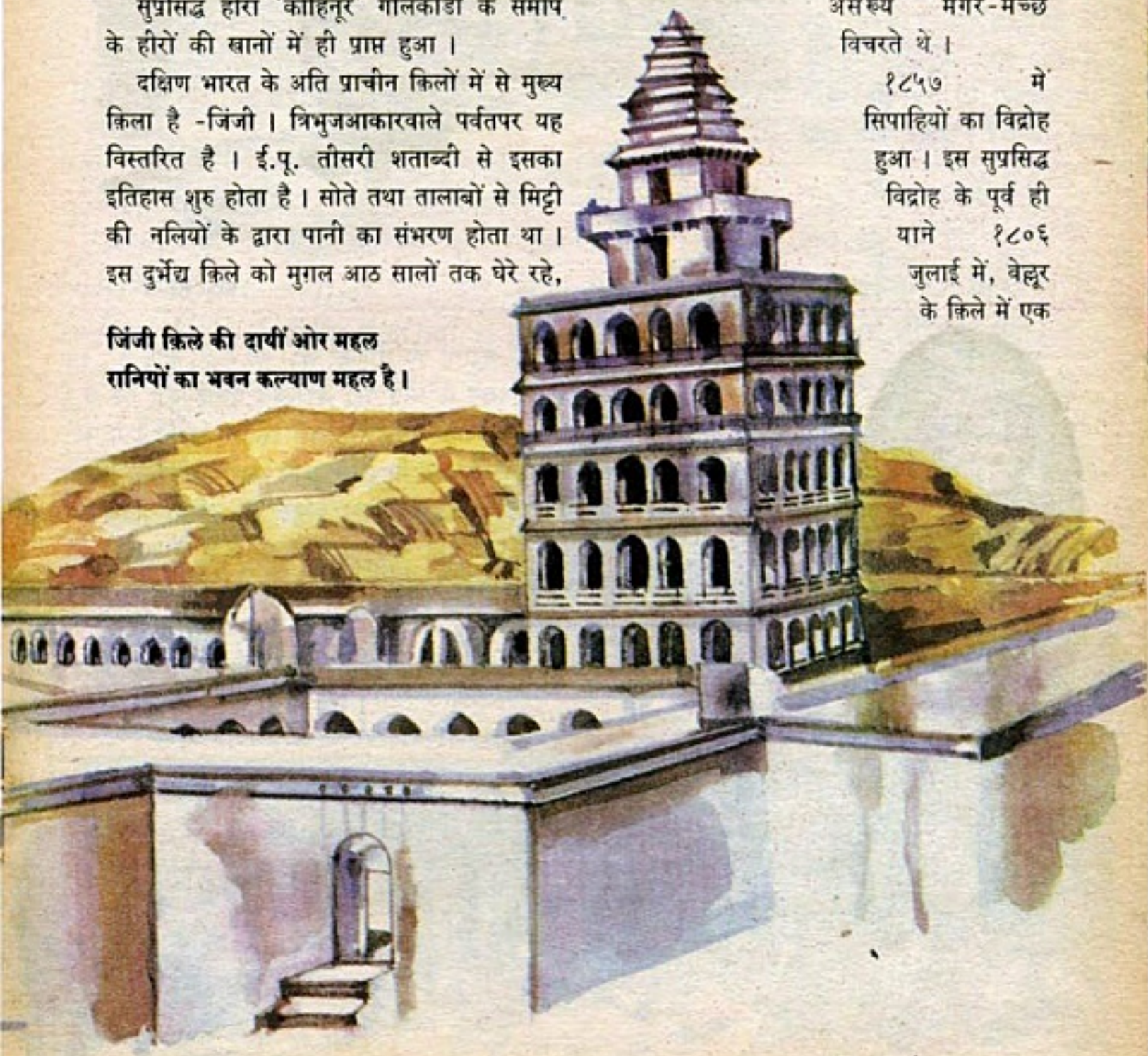
विद्रोह हुआ। यहाँ के सिपाहियों ने २८० ब्रिटिश सैनिकों को पकड़ लिया और बंदी बना दिया। दूसरे दिन ब्रिटिश सेनाओं ने आकर उन्हें छुड़ाया।

तीनों तरफ़ों से बहती हुई कावेरी नदी के तट पर के श्रीरंगपट्टणम को एक द्वीप क़िला कह सकते हैं। चौथी तरफ़ बहुत

वेल्लूर क़िला

हैदर अली

ही बड़ी चहारदीवारियाँ और काली चट्टानों को खोदकर खुदी हुई गहरी खाई है। इस खाई के पानी के स्तर को समतल रखने के लिए यहाँ आवश्यक प्रबंध किये गये थे।

नौवीं शताब्दी में यहाँ रंगनाथ मंदिर का निर्माण हुआ। इसलिए इसका नाम पड़ा श्रीरंगपट्टणं। साहसी व वीर हैदर अली तथा टिप्पुसुल्तान के कारण इसे ऐतिहासिक प्रसिद्धि मिली। केवल लकड़ी से ही बनाये गये टिप्पु सुल्तान के 'दरिया दौलत' के कुड्य चित्र बहुत ही सुंदर हैं। वे यहाँ गर्मी के दिनों में ठहरने आते थे। उन्हीं का बनाया हुआ दूसरा महल था 'लालमहल'। १७९९, मई ४ को जो युद्ध हुआ, उसमें ब्रिटिश सैनिकों ने इस महल को तहस-नहस कर दिया। टिप्पू ने भी इसी युद्ध में वीरगति प्राप्त की। इस क़िले के शिथिल अंग पूर्व इतिहास के साक्षी बनकर रह गये।

अशुभ गृह

अरण्य-मार्ग पर, सूर्यास्त के समय मँझली उम्र का एक यात्री यात्रा कर रहा था। उसके चेहरे पर उदासी छायी हुई थी। बीच-बीच में अपनी दृष्टि चारों ओर फैला रहा था और आप ही आप बड़बड़ा रहा था।

इतने में एक बूढ़ा आदमी उच्च स्वर में रोता हुआ उसके सामने आया।

यात्री ने उस बूढ़े को रोका और पूछा "क्यों रो रहे हो?" बूढ़ा नाराज़ होता हुआ बोला "मेरे दुख के बारे में जानने की ज़रूरत तुम्हें क्यों पड़ी ? तुम थोड़े ही मेरे दुख को दूर कर सकते हो; मेरे आँसुओं को पोंछ सकते हो।"

"जो हँसता रहता है, उससे कोई भी उसकी हँसी का कारण नहीं पूछता। परंतु रुलाई तो असहज है, इसलिए पूछे बिना रह नहीं सका" यात्री ने कहा।

इस बार और नाराज़ होता हुआ बूढ़ा बोला "मेरी उम्र में आधी भी उम्र नहीं होगी तुम्हारी। बात तो ऐसी कर रहे हो, मानों महाज्ञानी हो। ज्योतिषी महेश पाँडे तो कह रहा था कि मैं और छे साल जीवित रहूँगा, लेकिन यहाँ के कुछ निकम्मे कहते हैं कि एक महीने से अधिक मैं ज़िन्दा नहीं रहूँगा। मैंने उस अशुभ गृह में क़दम क्या रखा, आफ़त मोल ली।"

"अशुभ गृह? वह कहाँ है ? अंधेरा छा रहा है। कहीं न कहीं तो आश्रय लेना है। इस जंगल में मालूम नहीं, कौन-कौन से क्रूर जंतु हैं। इससे अच्छा तो यही है कि मैं उस अशुभ घर में शरण लूँ। हो सकता है, मेरे लिए वह शुभ निकले।" यात्री ने कहा।

"थोड़ी दूर और जाओ। बायीं ओर मुड़ो तो अशुभ गृह दिखेगा।" कहता हुआ, ज़ोर-ज़ोर से रोता हुआ दौड़ता हुआ वहाँ से चला

लक्ष्मीनारायण तिवारी

गया। यात्री की समझ में नहीं आया कि वह बूढ़ा क्यों रो रहा है। मगर उसे लगा कि इस रुलाई का कारण अवश्य ही वह अशुभ घर ही होगा।

यात्री थोड़ी दूर गया और बायीं तरफ़ मुड़ा। उसने देखा कि ऊँचे-ऊँचे हरे वृक्षों के बीच में एक पुराना घर था। यात्री को लगा कि यही अशुभ गृह है। उसने निर्णय कर लिया कि रात यहीं गुज़ारूँगा। उसने बंद दरवाज़े को धीरे से खटखटाया।

उस गृह के मुखद्वार की लकड़ी में दीमक लग चुकी थी। चैले फट चुके थे, और विकृत दीख रहे थे। थोड़ी देर बाद दरवाज़ा खुला। दरवाज़ा खोला एक कुबड़े ने।

यात्री ने उससे पूछा कि क्या आज रात को मैं यहाँ ठहर सकता हूँ। कुबड़े ने कहा ''क्यों नहीं। यात्रियों के लिए ही तो इस जंगल के बीच में इतना बड़ा घर बनाया है।''

यात्री घर के अंदर गया। उसने देखा कि वहाँ चार कुबड़े खिडकियों के किनारों और पाटों पर दीप रख रहे थे। पर उन दीपों में तेल नहीं था। वे तो चमकते हुए, बड़े-बड़े मणि थे, जो प्रकाश फैला रहे थे।

यात्री उन्हें देखकर आश्चर्य में डूब गया और बोल उठा ''बड़ी ही विचित्र और आश्चर्य की बात है। विश्वास ही नहीं हो रहा है कि जो देख रहा हूँ सच है या सपना।''

''जीवन ही विचित्र है। इससे भी बड़ा और एक आश्चर्य भी है'' कहता हुआ एक

कुबड़ा हँसा और कहा "जब तक यहाँ रहना चाहते हो, आराम से रहो। परंतु, तुम हमसे कोई सवाल नहीं करोगे। पहली मंज़िल में जो स्वर्णकवाट है, उसे किसी भी हालत में नहीं खोलोगे।"

"नहीं खोलूँगा। पर यह तो बताओ कि इस घर का मालिक कौन हैं ?" "पहले ही बता चुका। हमसे कोई सवाल नहीं करोगे। मेरे साथ चलो।" कुबड़े ने कहा।

यात्री नहाना चाहता था। जैसे ही यात्री ने अपनी इच्छा प्रकट की, कुबड़े ने गुलाबी पंखुडियों तथा इत्र से मिश्रित पानी का इंतज़ाम किया।

नहाते ही यात्री को ज़ोर की भूख लगी। अंदर के विशाल कमरे में बहुत ही बड़ी मेज़ थी। उसपर ढक्कनों से बंद कुछ बरतन थे। यात्री खाने बैठ गया तो कुबड़ा, यात्री जो-जो खाना चाहता था परोसता गया। उसने कुबड़ों से बहुत-से सवाल पूछने चाहे। किन्तु वे नाक पर तर्जनी रखकर उसे चुप रहने के लिए इशारा करते थे। उन्होंने उसके संदेहों को दूर करने की बात तो दूर, जवाब तक नहीं दिया।

एक बहुत ही बड़े कमरे में उसके सोने का इंतजाम हुआ। खाट पर बहुत ही मुलायम बिस्तर बिछाया गया। एक कुबड़े ने खिड़की से रेशमी परदे को हटाया। बस, पुष्प की सुगंध से भरी ठंडी हवा बहने लगी। बाहर खिली चाँदनी थी।

इंद्रभवन जैसे इस गृह को, रोते हुए उस

गया। यात्री की समझ में नहीं आया कि वह बूढ़ा क्यों रो रहा है। मगर उसे लगा कि इस सलाई का कारण अवश्य ही वह अशुभ घर ही होगा।

यात्री थोड़ी दूर गया और बायीं तरफ़ मुड़ा। उसने देखा कि ऊँचे-ऊँचे हरे वृक्षों के बीच में एक पुराना घर था। यात्री को लगा कि यही अशुभ गृह है। उसने निर्णय कर लिया कि रात यहीं गुज़ारूँगा। उसने बंद दरवाज़े को धीरे से खटखटाया।

उस गृह के मुखद्वार की लकड़ी में दीमक लग चुकी थी। चैले फट चुके थे, और विकृत दीख रहे थे। थोड़ी देर बाद दरवाज़ा खुला। दरवाज़ा खोला एक कुबड़े ने।

यात्री ने उससे पूछा कि क्या आज रात को मैं यहाँ ठहर सकता हूँ। कुबड़े ने कहा "क्यों नहीं। यात्रियों के लिए ही तो इस जंगल के बीच में इतना बड़ा घर बनाया है।"

यात्री घर के अंदर गया। उसने देखा कि वहाँ चार कुबड़े खिडकियों के किनारों और पाटों पर दीप रख रहे थे। पर उन दीपों में तेल नहीं था। वे तो चमकते हुए, बड़े-बड़े मणि थे, जो प्रकाश फैला रहे थे।

यात्री उन्हें देखकर आश्चर्य में डूब गया और बोल उठा "बड़ी ही विचित्र और आश्चर्य की बात है। विश्वास ही नहीं हो रहा है कि जो देख रहा हूँ सच है या सपना।"

"जीवन ही विचित्र है। इससे भी बड़ा और एक आश्चर्य भी है" कहता हुआ एक

कुबड़ा हँसा और कहा "जब तक यहाँ रहना चाहते हो, आराम से रहो। परंतु, तुम हमसे कोई सवाल नहीं करोगे। पहली मंज़िल में जो स्वर्णकवाट है, उसे किसी भी हालत में नहीं खोलोगे।"

"नहीं खोलूँगा। पर यह तो बताओ कि इस घर का मालिक कौन हैं ?" "पहले ही बता चुका। हमसे कोई सवाल नहीं करोगे। मेरे साथ चलो।" कुबड़े ने कहा।

यात्री नहाना चाहता था। जैसे ही यात्री ने अपनी इच्छा प्रकट की, कुबड़े ने गुलाबी पंखुडियों तथा इत्र से मिश्रित पानी का इंतज़ाम किया।

नहाते ही यात्री को ज़ोर की भूख लगी। अंदर के विशाल कमरे में बहुत ही बड़ी मेज़ थी। उसपर ढक्कनों से बंद कुछ बरतन थे। यात्री खाने बैठ गया तो कुबड़ा, यात्री जो-जो खाना चाहता था परोसता गया। उसने कुबड़ों से बहुत-से सवाल पूछने चाहे। किन्तु वे नाक पर तर्जनी रखकर उसे चुप रहने के लिए इशारा करते थे। उन्होंने उसके संदेहों को दूर करने की बात तो दूर, जवाब तक नहीं दिया।

एक बहुत ही बड़े कमरे में उसके सोने का इंतजाम हुआ। खाट पर बहुत ही मुलायम बिस्तर बिछाया गया। एक कुबड़े ने खिड़की से रेशमी परदे को हटाया। बस, पुष्प की सुगंध से भरी ठंडी हवा बहने लगी। बाहर खिली चाँदनी थी।

इंद्रभवन जैसे इस गृह को, रोते हुए उस

बूढ़े ने अशुभ गृह क्यों कहा, यात्री ने बहुत सोचा, लेकिन उसकी समझ में कुछ नहीं आया।

सबेरा होने पर स्नान व भोजन का प्रबंध बहुत ही बढ़िया हुआ। यात्री अपने ही आप इस बात पर झल्ला रहा था कि बात करने के लिए भी यहाँ कोई है नहीं। उस दिन की शाम तक उस घर के सोलह कमरों में इधर-उधर यात्री टहलता रहा।

यात्री ऊब गया था। तो वह घर की पहली मज़िल में गया। वहाँ एक ही कमरा था। सोने से बना उस कमरे का दरवाज़ा चमक रहा था। कमरे का दरवाज़ा बहुत ही अद्वितीय था। यात्री को लगा कि अंदर तो और भी अद्भुत होगा। पर कुबड़ों ने पहले ही उसे आगाह किया था कि उस कमरे का दरवाज़ा खोलना मना है। यात्री को लगा कि मैं दरवाज़ा नहीं खोलूँगा तो नींद नहीं आयेगी; रात भर बेचैन ही रहूँगा।

जो भी होना है, होकर रहेगा, ऐसा सोचकर धीरे से दरवाज़ा ढ़केला। उसकी आँखें चौंधिया गयीं। संगमरमर के पथ्थरों से कमरा जगमगा रहा था। उसकी दीवारें सोने के पथ्थरों से बनायी गयीं। उन दीवारों में कहीं-कहीं हीरे-मोती जड़े हुए थे। उस कमरे से नीचे जाने के लिए सीढ़ियाँ थीं। फिसल जाने के ड़र से यात्री धीरे-धीरे संभलकर सीढ़ियों से नीचे उतरा।

बस, कहीं से एक कौआ उड़ता हुआ आया और उसके सिर को घायल कर दिया। म्याव-म्याव करता हुआ एक बिलाव उसकी छाती पर आ गिरा। वह इतने ज़ोर से चिल्ला पड़ा कि यात्री के कान फ़ट-से गये। एक चमगीदड़ उसके सिर पर से तीन बार उड़ा। यात्री भय से थरथराने लगा। वह लौटने के लिए मुडने ही वाला था कि इतने में बिजली की कड़क की तरह एक ध्वनि निकली "मूर्ख, ठीक बीस साल बाद इसी दिन तुम्हारी मृत्यु निश्चित है।"

यह सुनते ही यात्री बहुत ही खुश हुआ

और अपने कमरे में लौट आया। वहाँ पाँचों कुबड़े एक-दूसरे के कंधे पर हाथ डाले कानाफूसी कर रहे थे।

यात्री ने उत्साह-भरे स्वर में पूछा "सब यहाँ क्यों इकट्ठे हो गये ?"

कुबड़े उसकी ओर आश्चर्य से देखते रहे और पूछा "तुम्हें मालूम हो गया कि तुम कब मरनेवाले हो ? यह जानकर भी रोने के बदले हँस रहे हो ? यह तो बड़ी ही विचित्र बात है।"

"मैं क्यों रोऊँ। अपनी मृत्यु का समय जानकर तो मैं बेहद खुश हूँ" यात्री ने कहा।

"बहुत ही लंबे अर्से के बाद तुम जैसे अजीब आदमी को हमने देखा। यह बात तो हमें तुरंत ही अपने मुखिया को बतानी होगी। लगता है, आगे से इस अशुभ गृह में हमारा कोई काम नहीं।" कहते हुए कुबड़े ग़ायब हो गये।

दूसरे ही क्षण अशुभ गृह भी आँखों से ओझल हो गया। अब यात्री पेड़ों के बीच की ख़ाली ज़मीन पर खड़ा है। वह खुशी-खुशी अपने ही आप बड़बड़ाने लगा "सच है, कोई भी आदमी जब अपनी मौत का समय जान लेता है, बेचैन हो जाता है, निश्चिंत नहीं रह पाता। लाखों में एक मुझ जैसा आदमी होगा जो, खुश हो पाता है।"

यह यात्री एक ग्रामीण था। उसे दिल की बीमारी थी। जिन-जिन वैद्यों और ज्योतिषियों ने उसकी परीक्षा की थी, सबका यही कहना था कि वह छे महीनों से अधिक ज़िन्दा नहीं रहेगा। सारे बंधनों को तोड़कर इसीलिए वह गाँवों में और जंगलों में घूमता जा रहा है। जब उसे मालूम हुआ कि और बीस सालों तक वह और ज़िन्दा रहेगा, तब वह बहुत ही खुश हुआ। इससे उसका आत्म-बल और आत्म-विश्वास बढ़ गये।

यात्री मन ही मन कुबड़ों को अपनी कृतज्ञता बताता हुआ अपने इष्टदेव की प्रार्थना करता हुआ स्वग्राम की ओर निकल पड़ा।

ज़रूरत

मारुती बढ़िया रसोइया है, लेकिन है बहुत ही सनकी। इसलिए साधारणतया कोई भी उसे रसोई बनाने बुलाता नहीं है। मारुती का पिता भीम पकवान कुछ ख़ास बना नहीं पाता, फिर भी लोग उसे बुलाते है। पिता की कमाई अच्छी है, अत: मारुती मज़े से दिन गुज़ारने लगा।

उसी गाँव में धर्मराज नामक एक किसान है। उसके बेटे को आस्थान में नौकरी मिली। रिश्तेदारों ने ज़िद की कि इस अवसर पर भोज दिया जाए। इंतज़ाम हुए, पर ऐन वक्त पर भीम बीमार पड़ गया। मजबूर होकर धर्मराज ने मारुती को पकवान बनाने को बुलाया।

मारुती रसोईघर में पैर रखते ही शिकायत करने लगा कि बरतन काफ़ी नहीं होंगे, लकड़ियाँ गीली हैं और खाद्य सामग्री निम्न स्तर की है। धर्मराज, मारुती का स्वभाव जानता है, इसलिए उसने चुपचाप सब कुछ सह लिया।

धर्मराज स्वत: आत्माभिमानी है। कभी भी किसी दूसरे की खोट ही नहीं निकालता। किन्तु कोई अनाप-शनाप कह दे तो हाथ धरे चुप नहीं बैठता। पर, इन परिस्थितियों में मारुती की बातें उसे सुननी ही पड़ीं। अगर वह उसका विरोध करे तो मामला बिगड़ जायेगा और रिश्तेदारों में उसकी बदनामी होगी।

रसोई पकाते-पकाते मारुती ने धर्मराज को कंजूस कहा। तब धर्मराज ने उससे कहा "मारुती, तुम्हारे पिता ने जो फेहरिश्त दी, उसी के मुताबिक़ सामग्री ले आया हूँ। बोलो, तुम्हें जो चाहिये, मँगाता हूँ।"

"रसोई बनाने के लिए मेरे पिता को बुलाने में ही आपकी कंजूसी स्पष्ट दिखायी पड़ती है। वे बस, पकवान बनाते मात्र हैं, लेकिन जब मैं बनाता हूँ, तब लोग उन्हें खाने तरस जाते हैं। उसका ज़ायका चख-चखकर खाते हैं।

इसलिए चाहिये दुगुनी सामग्री।'' मारुती उसी तैश में बोले जा रहा है और बीच-बीच में चिल्लाये जा रहा है। बीच में एक बार धर्मराज ने कहा ''बेटे, जो-जो तुम चाहते हो, मँगाकर दे रहा हूँ, फिर भी बीच-बीच में यों क्यों चिल्लाते हो?''

''मेरी यही आदत है। आपको पसंद ना आये तो बोल देना। अभी चला जाऊँगा।'' मारुती ने धमकी दी।

धर्मराज ने गिड़गिड़ाया और आख़िर अपना काम पूरा कर लिया।

पकवान बहुत ही स्वादिष्ट बने। अतिथियों ने दावत की भरपूर प्रशंसा की। धर्मराज ने, अपने वादे से भी अधिक रक़म मारुती को दी।

किन्तु मारुती के बुरे बरताव के बारे में सब लोगों को मालूम हो गया। पकवान चाहे स्वादिष्ठ ही क्यों ना बनें, पर धर्मराज की सहिष्णुता को लेकर चर्चाएँ होने लगीं।

कुछ समय बाद भीम मर गया। मारुती बहुत ही मुश्किल से दिन गुजारने लगा। पकवान बनाकर कमाना भी उससे हो नहीं पाता, क्योंकि उसके सनकी स्वभाव से परिचित कोई भी उसे बुलाता नहीं है।

इन परिस्थितियों में मारुती, धर्मराज के पास गया और कहा ''महाशय, मालूम हुआ कि आपके घर में रसोइये की ज़रूरत है। मुझे रख लीजिये।''

धर्मराज ने सोच-विचार के बाद कहा ''मेरी पत्नी अस्वस्थ है। थोड़े दिनों तक रसोइये की ज़रूरत तो है, लेकिन मैं ज़्यादा वेतन नहीं दे पाऊँगा। तुम ज़मींदार के घर में रसोइया बनोगे तो तुम्हें वहाँ बड़ी रक़म मिलेगी। इसलिए वहीं जाओ तो अच्छा होगा।''

मारुती ने कहा ''मैंने भी सुना था कि ज़मींदार के घर में रसोइये की ज़रूरत है। परंतु, मालूम हुआ कि ग़लती करने पर वहाँ कड़ी सी कड़ी सजा दी जाती है। इसलिए वहाँ जाने से डर रहा हूँ।''

''ग़लती करने पर कहीं भी सज़ा तो दी जाती है। इसलिए अच्छा यही है कि ग़लती मत करो'' धर्मराज ने सलाह दी।

''बात यह है कि मैं मुँहफट हूँ। ज़मींदार

के पास यह सब कुछ नहीं चलेगा'' मारुती ने अपनी त्रुटि मान ली।

एक क्षण रुककर धर्मराज बोला ''ज़मींदार अच्छा आदमी है। किसी को भी अनावश्यक गाली नहीं देता। अमीर और ग़रीब दोनों का आदर समान रूप से करता है। तुम तो जानते हो कि मैं भी मुँहफट हूँ। नाराज़ हो जाने पर जो मुँह में आता है, फ़ट् से बोल देता हूँ। तुम सह पाओगे?''

मारुती उसकी बातों पर आश्चर्य प्रकट करता हुआ बोला ''आप और मुँहफट! मैं विश्वास नहीं करता। जिस दिन आपने दावत दी, उस दिन तो आपने मेरी हर बात मान ली। मेरी हर मांग पूरी की। बहुत ही शांत दिखायी पड़े। बड़े ही सहनशील लगे। दावत पर आये सबों ने आपकी सहिष्णुता की भरपूर प्रशंसा भी की। मैं यह कैसे भुलाऊँगा?''

''तब तुम्हारे सनकीपन को मेरी ज़रूरत ने सह लिया। अब तो तुमसे मुझे ऐसी कोई ज़रूरत नहीं है। अब मेरी गालियाँ सहने की ज़रूरत तुम्हें है तो आओ और मेरे पास नौकरी करो। नहीं तो किसी और जगह पर काम ढूँढ़ लो। तुम्हारे सनकीपन को मैं वर्तमान परिस्थितियों में नहीं सहूँगा। उल्टे, काम ठीक तरह से ना करने पर या बहाने बनाने पर मैं तुम्हें खूब गालियाँ भी दूँगा।'' धर्मराज ने सच उगल दिया।

अपने दुख पर काबू रखते हुए हाथ जोड़कर मारुती ने कहा ''महाशय, आज तक दूसरों से मैं बहुत ही बुरी तरह से पेश आता रहा। अन्यों के सद्‌गुणों तथा न्यायबुद्धि की मैंने अवहेलना की। मैं एक महामूर्ख की तरह व्यवहार करता रहा। मैंने आपको बहुत सताया, फिर भी मुझपर बिना झल्लाये मेरे साथ आपने सद्व्यवहार किया और मुझे सबक़ सिखाया। मेरे दिमाग़ को आपने ठिकाने लगाया। आप मुझे रसोइये का काम दें या ना दें, आपका मैं बहुत ऋणी हूँ। आपके उदार स्वभाव को जन्म-भर याद रखूँगा।''

धर्मराज, मारुती में आये परिवर्तन पर बहुत ही आनंदित हुआ। उसने अपने ही घर में नौकरी दी। अब मारुती ज़रूरत के मुताबिक़ रहने-सहने लगा। अच्छा नाम कमाया और आराम से दिन गुज़ारने लगा।

विदुर के चले जाते ही दुर्योधन पिता के पास आया और कहने लगा ''पिताश्री, यह विदुर सदा आप ही के साथ रहने लगा है। इसलिए अपनी बात आपसे कह भी नहीं पा रहा हूँ। वह तो जब देखो, तब मेरे शत्रु पाँडवों की ही प्रशंसा करता रहता है। हमें तो चाहिये, उनका पतन। इसके लिए कोई दूसरा मार्ग ढूँढ़ना होगा।''

धृतराष्ट्र ने दुर्योधन से कहा ''पुत्र, इसके बारे में तुम्हारे और मेरे अभिप्राय एक समान हैं। इनमें भेद थोड़े ही हो सकता है। विदुर पाँडवों की प्रशंसा करता रहता है और मैं चुपचाप सुनता जाता हूँ। मैं उसके विरुद्ध कुछ कह भी तो नहीं सकता। एक काम करो, तुम और कर्ण दोनों अच्छी तरह सोचो और विचारो। फिर मुझसे बताना कि तुम दोनों ने क्या निर्णय लिया।''

''द्रुपद के दामाद हो जाने से पाँडव और बलशाली हो गये हैं। उन दोनों को एक-दूसरे से अलग करना होगा। ऐसा उपाय निकालना होगा, जिससे वे एक-दूसरे के शत्रु बन जाएँ। इसके लिए कुशल व दक्ष तांत्रिकों को काम पर लगाना होगा। उन तांत्रिकों की सहायता से द्रुपद तथा धृष्टद्युम्न पाँडवों के कट्टर शत्रु बन जाएँ और वे पाँचाल देश से निकाल दिये जाएँ।'' दुर्योधन ने कहा।

दुर्योधन को एक और बड़ा षड़यंत्र सूझा। उसने कहा कि द्रौपदी के पाँच पति हैं। उसमें और उसके पतियों के बीच द्वेष और घृणा के बीज बोये जाएँ। इसके लिए समर्थ और कपटी परिचारिकाएँ नियुक्त की जाएँ, जो द्रौपदी और

तब समझ लेता कि प्रलय ही हो गया। अगर भीम हमारी योजना के अनुसार मर गया तो अर्जुन अकेले कुछ नहीं कर सकेगा। वह निस्सहाय हो जायेगा। अग्नि की शक्ति वायु के बिना क्षीण हो जायेगी। और अर्जुन हमारे कर्ण की बराबरी का भी नहीं है। मैं तो दावे के साथ कह सकता हूँ कि भीम ना रहा तो बाक़ी चारों पाँडव हमारे दास हो जाएँगे। ऐसी चाल चलेंगे कि वे वहाँ से आ जाएँगे और हमारे अधीन रहकर हमारी सेवाएँ करते रहेंगे।''

तब कर्ण ने कहा ''तुम्हारे ये सारे उपाय व्यर्थ हैं। इन उपायों से हम अपने लक्ष्य की पूर्ति नहीं कर सकते। इनसे पाँडवों को किसी प्रकार का नष्ट नहीं पहुँचता। अपने महाशूर

उसके पतियों के बीच द्वेष और घृणा के बीज बोवें। इसके लिए समर्थ परिचारिकाएँ नियुक्त की जाएँ, जो द्रौपदी के मस्तिष्क को कलुषित कर दें। उसने सोचा कि उसके ये षड्यंत्र सफल हो जाएँ तो पाँडव हस्तिनापुर लौटना चाहेंगे। उस समय कुछ लोग पाँचाल देश भेजे जाएँ और उन्हें विश्वास दिलाएँ कि हस्तिनापूर पूरा अस्त-व्यस्त है और वहाँ जीवन बिताना दुर्भर है।

कर्ण वहाँ आकर दुर्योधन के सब विचार सुनता रहा। तब दुर्योधन ने धृतराष्ट्र और कर्ण से एक और कुटिल योजना बतायी। उसने कहा ''पाँडवों में भीम ही सच्चा पराक्रमी है। उसे रहस्यपूर्वक मरवा डालेंगे। भीम और अर्जुन अग्नि और वायु के समान हैं। जब वे एकसाथ होते हैं

दामादों को, प्रलोभन में आकर क्या द्रुपद छोड़ देगा? उनसे वैर मोल लेगा? अपनी पुत्री के प्रति द्रोह करेगा? द्रौपदी ने पाँडवों से विवाह किया जब कि वे हीन स्थिति में थे। किन्तु आज स्थिति भिन्न है। आज वे अच्छी दशा में हैं। वे उससे प्रेम कर रहे हैं। उसके प्रति उनमें आदर की भावना है। उनकी सेवा ही द्रौपदी अपना अहोभाग्य मान रही है। भला क्योंकर, द्रौपदी उन्हें छोड़ देगी? दूसरों की बातों में आकर ऐसे कदम क्यों उठायेगी? इसलिए तुम्हारी यह चाल नहीं चलेगी। तुम्हारी योजना त्रुटिपूर्ण व आधारहीन है, खोखला है। तुम्हारी दूसरी योजना है, भीम को रहस्यपूर्वक मरवाने का। इसके पहले इस

दिशा में हमसे किये गये कितने ही प्रयत्न विफल हुए। अगर हमारे गुप्तचरों ने उनके कान भरे भी कि हस्तिनापुर का जीवन कलुषित हो गया है, वहाँ रहना दुर्भर हो गया है, तो वे क्या इसका विश्वास करेंगे ? उन्हें इतना मूर्ख ना समझना। वर्तमान स्थिति में हमारे सम्मुख एक ही मार्ग है और वह है - युद्ध। हमारी सेना उनकी सेना से बड़ी है। यादव, चैद्य, मगध उनकी सहायता करने आयें, उसके पहले ही हम उनपर आक्रमण करेंगे और उनका विनाश करेंगे। इसमें ना ही कोई अधर्म है या ना ही अन्याय।''

धृतराष्ट्र ने कर्ण का समर्थन करते हुए कहा ''कर्ण का कहा समुचित लगता है। भीष्म, द्रोण और विदुर से भी उन-उनकी रायें पूछकर जानेंगे।''

भीष्म, द्रोण, विदुर को समाचार भेजा गया। उन्होंने आकर धृष्टराष्ट्र के मुँह से सारी बातें सुनीं। भीष्म ने अपना अभिप्राय यों बताया ''पाँडव और कौरव मेरी दृष्टि में समान हैं। पितृपितामहों से सुस्थिर रूप से चले आते हुए राज्य का आधा भाग पाँडवों को मिलना चाहिये। ऐसा ना करने से आपकी अप्रतिष्ठा होगी, अपकीर्ति होगी। राजाओं के लिए अपकीर्ति से मृत्यु कहीं भली है। दुर्योधन, तुम पाँडवों के साथ बहुत ही अन्याय कर चुके; उनके साथ तुम्हारा व्यवहार बहुत ही नीच और नित्कृष्ट रहा। किन्तु तुम उनका कुछ भी बिगाड़ नहीं
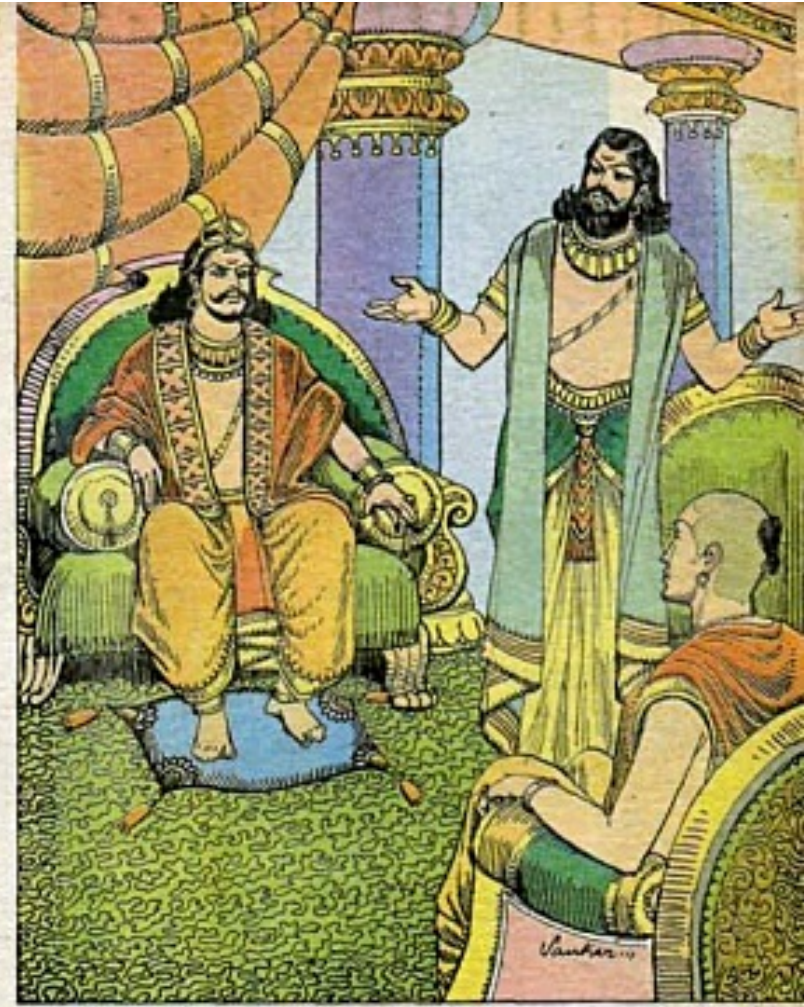
सके। जब मैंने कुन्ती और पाँडवों के लाख-गृह में जलकर मर जाने का समाचार सुना, तब किसी के भी मुख को देखने से मुझे घृणा होती थी। वे जीवित रह गये, इसलिए तुम अनादर से बच गये। आगे से ही सही, अच्छे काम करो, सन्मार्ग पर चलो और सुखी रहो।''

इसके बाद द्रोण ने यों कहा ''भीष्म का ही अभिप्राय मेरा भी है। पाँडवों को बुलाकर उन्हें आधा राज्य दे देना आवश्यक और श्रेयस्कर भी है। द्रुपद, उनके बेटे, कुन्ती देवी, पाँडवों और द्रौपदी को वस्त्र और आभूषण भेंट में भेजिये। जो जाएँगे, वे पाँडवों से प्यार से व्यवहार करें, और उन्हें हस्तिनापुर आने का निमंत्रण दें, उन्हें साथ ले आवें। इसके लिए द्रुपद को मनाना भी

आवश्यक है।"

बीच में दखल देते हुए कर्ण ने दुर्योधन से कहा "ये दोनों वयोवृद्ध हमेशा शत्रुओं की प्रशंसा करते हैं और तुम्हारी प्रगति में बाधा डालते रहते हैं। इनकी बातों पर ध्यान मत दो।"

कर्ण की कड़ुवी बातों पर द्रोण क्रोधित होकर बोला "तुम्हें पॉडवों पर क्रोध है, प्रतीकार की भावना है, इसलिए हमारा कहा तुम मानने को तैयार नहीं। दोष हमपर थोप रहे हो। तुम शायद समझते हो कि कौरवों की भलाई अकेले तुम्हीं चाहते हो, हम नहीं। जो भी हो, हमारी सलाह के अनुसार नहीं करते हो तो बुरा कारवों का ही होगा।"

तब बिदुर ने कहा "राजन्, हम आपकी भलाई चाहते हैं। केवल आपसे कह सकते हैं, कराने का अधिकार नहीं रखते। भीष्म व द्रोण ने जो भी कहा, कौरवों के हित की ही बातें कहीं। इनसे बढ़कर आपका हित चाहनेवाले और कोई होंगे भी नहीं। इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती कि इनसे आपको हानि पहुँचनेवाली है। इनमें पक्षपात की बुद्धि नहीं है। आप अपने पुत्रों को बहुत चाहते हैं, इसलिए आपको संतुष्ट करने के लिए मीठी-मीठी बातें करनेवाले होंगे। मैं आपको सावधान करता हूँ। ऐसे लोगों से आप दूर रहिये। ऐसे लोगों की बातें मानने पर आपके पुत्रों के अहित की संभावना है। दुस्साहस नाश की ओर ले जाता है। पॉडवों को जीतना कोई सुलभ कार्य नहीं। उन्हें कृष्ण का सहारा है। अच्छाई से जो साधा जा सकता है, वह आयुध के बल पर साधा नहीं जा सकता। हस्तिनापुर की जनता पॉडवों को देखने लालायित है। इसलिए उन्हें बुलाइये और सबको प्रसन्न कीजिये।"

धृतराष्ट्र थोड़ी देर तक सोचता रहा और अपना निर्णय सुनाया "भीष्म, द्रोण, आपकी कही बातों में सच्चाई है, वास्तविकता है। उन्ही में कौरवों का हित निहित है। मेरी दृष्टि में पॉडव कौरवों से कोई अलग नहीं हैं। दोनों समान हैं। विदुर, तुम स्वयं जाओ। पॉडवों, कुन्ती तथा उनकी पत्नी कृष्णा को यहाँ ले आओ। सौभाग्यवश वे लाख के गृह में जलने से बच गये। द्रुपद की पुत्री उनकी पत्नी बनी,

सचमुच ही उनका सौभाग्य है। अब मैं निश्चिंत हूँ।"

अनगिनत रत्नाभरण, रेशमी वस्त्र तथा और अनेकों भेंटें लेकर बिदुर कांपिल्य नगर पहुँचा। द्रुपद, धृष्टद्युम्न, कृष्ण और पाँडवों से मिला। उनका क्षेम समाचार जानने के बाद हस्तिनापुर की सारी बातें बतायीं। जिन-जिन को जो भेंटे देनी थीं, दीं।

विदुर ने भरी सभा में द्रुपद से कहा "महाराज, धृतराष्ट्र और भीष्म इस बात पर बहुत ही आनंदित हैं कि आपके साथ पाँडवों का बंधुत्व जुड़ा है। आपका क्षेम समाचार जानने के लिए उन्होंने मुझे यहाँ भेजा है। आपके दोस्त द्रोण ने मुझे अपनी तरफ़ से आपको प्यार से आलिंगन में लेने को कहा है। आपकी पुत्री का पाँडवों की पत्नी बनना, उनके लिए राज्य-प्राप्ति से भी कहीं बढ़कर है। पाँडवों का हस्तिनापुर छोड़े, बहुत समय बीत गया। कौरव उन्हें देखने बहुत ही आतुर हैं। अंत:पुर की स्त्रीयाँ द्रौपदी को देखने के लिए अति आतुर हैं। धृतराष्ट्र ने मुझे आज्ञा दी है कि पाँडवों को, कुन्ती, द्रौपदी सहित मैं हस्तिनापुर ले आऊँ। मुझे इसकी अनुमति दीजिये।"

द्रुपद ने विदुर से कहा "हम कौरवों के बंधु बने, इस पर हमें भी अपार हर्ष हो रहा है। धृतराष्ट्र की आज्ञा हमारे लिए शिरोधार्य है। फिर आप जैसे सूक्ष्मग्राही स्वयं उन्हें लेने आयें और मैं अनुमति ना दूं, यह कैसे हो सकता है?

किन्तु यह भी जानना आवश्यक है कि बलराम, कृष्ण की क्या राय है। वे तो सदा पाँडवों का कल्याण चाहते हैं। अलावा इनके, प्रांज्ञ, धर्मपारायण व शक्तिशाली पाँडव क्या चाहते हैं, यह भी जानना नितांत आवश्यक व उचित होगा।"

धर्मराज ने द्रुपद की बातों को काटते हुए कहा "महाराज, हम तो आपके अधीन रह रहे हैं। आप सोच-विचारकर, जो निर्णय लेंगे, उसे कार्यान्वित करना हमारा धर्म होगा।"

तब कृष्ण ने सभासदों से कहा "विदुर की इच्छा के अनुसार, पाँडवों को हस्तिनापुर भेजना ही मैं उचित मानता हूँ। किन्तु मैं भी जानना चाहता हूँ कि सब प्रकार से पाँडवों की भलाई
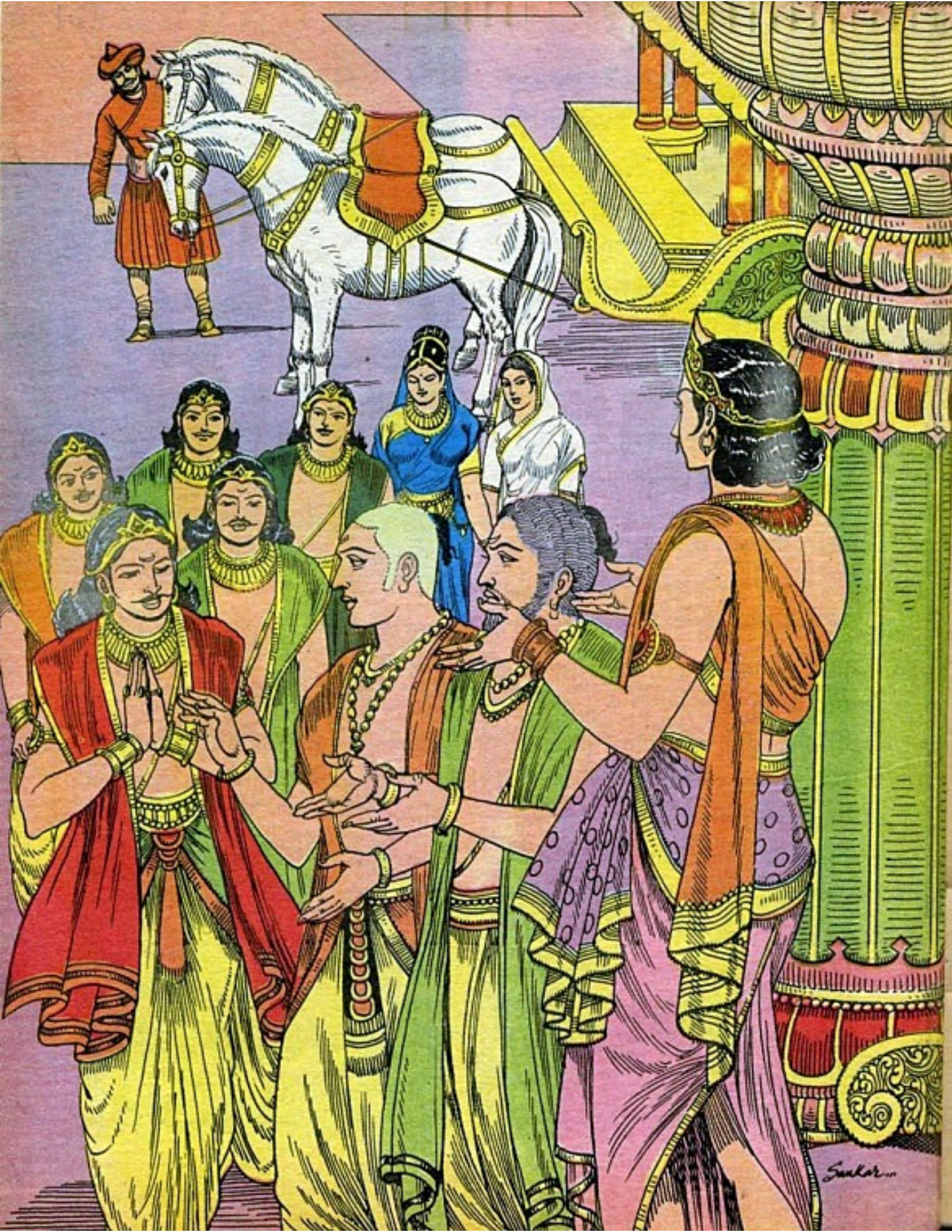
चाहनेवाले द्रुपद का क्या अभिप्राय है।''

द्रुपद ने कहा ''अभी-अभी पांडव मेरे निकट बंधु हुए हैं। वे तो बाल्य-काल से ही आपके आप्त हैं। दूर रहकर भी आप उन्हीं का भला चाहते हैं। अतः आप का अभिप्राय हमारा भी है।''

यों द्रुपद की अनुमति मिल गयी। पांडव, द्रुपद और कुन्ती को लेकर विदुर के साथ हस्तिनापुर जाने निकल पड़े। कृष्ण बलराम भी उनके साथ-साथ आये। विदुर के भेजे हुए दूत ने पहले ही आकर धृतराष्ट्र से यह बात बतायी। संतुष्ट धृतराष्ट्र ने पांडवों का स्वागत करने के लिए विकर्ण, चित्रसेन, द्रोण व कृपाचार्य को भेजा।

उनके साथ जब पांडव हस्तिनापुर में पहुँचे, तब पूरा नगर सजा हुआ था। जनता उन्हें देखकर अति आनंदित हुई। राजभवन पहुँचकर उन्होंने धृतराष्ट्र और भीष्म के आशीर्वाद लिये।

कुछ दिनों के बाद धृतराष्ट्र ने पांडवों और कृष्ण को बुलाकर कहा ''पुत्रो, मैं नहीं चाहता कि तुममें और कौरवों में शत्रुता की भावना बढ़े। अतः अभी मैं तुम्हें आधा राज्य सौंप रहा हूँ। आज से आप लोग खांडवप्रस्थ में स्थिर हो जाइये और सुख से अपना शासन चलाइये।''

धर्मराज ने 'हाँ' कहा और उपस्थित सबों को विनयपूर्वक प्रणाम किया। अपने भाइयों, माता कुन्ती, पत्नी तथा कृष्ण बलराम को लेकर खांडवप्रस्थ पहुँचा। खांडवप्रस्थ बड़ा ही भयंकर अरण्य था। इस बात को जानकर कृष्ण ने इंद्र का स्मरण किया। कृष्ण का उद्देश्य जानकर इंद्र ने विश्वकर्मा को वहाँ भेजा।

विश्वकर्मा ने एक अच्छे प्रदेश को चुना और वहाँ एक सुंदर व भव्य नगर का निर्माण किया। चारों ओर ऊँची-ऊँची दीवारों, प्राकार के बाहर गहरी खाइयों, अंदर चमकते हुए श्वेत भवनों, गरुडाकार का सिंहद्वार, विशाल वीथियों, राजाओं के आस्थान, देवालयों, कहीं-कहीं सुंदर उद्यानवनों आदि से नगर बहुत ही सुंदर और असमान दिखाई दे रहा था। इसका नाम रखा गया इंद्रप्रस्थ। नगर के बीचों-बीच पांडवों के निवास के लिए गृह बनाये गये। धर्मराज अपने भाइयों और पत्नी समेत सुख से वहाँ रहने लगा। सुस्थिरिता के बाद कृष्ण पांडवों से बिदा लेकर द्वारका लौट गया।

बोलनेवाला तोता

हेलापुरी राजधानी की गली में एक बूढ़ा आदमी, पिंजड़े में बंद तोतों को दिखाते हुए रास्ते से गुजरते हुए लोगों का ध्यान आकृष्ट करते हुए कह रहा था ''सज्जनो, ये बोलनेवाले तोते हैं। जो सुनते है, वही दुहराते हैं। एक तोते का दाम है - पाँच अशर्फ़ियाँ। हमारी बस्ती का रिवाज़ है कि जो तोता बिक जायेगा, वह वापस नहीं लिया जायेगा। सब अपने-अपने भाग्य की बात है।''

कुछ लोग तोते खरीदकर जा रहे थे। वीर ने यह देखा तो उसने भी एक तोता खरीदा और अपने घर ले गया। फिर उसने तोते से बुलवाने के प्रयत्न किये। किन्तु तोते ने वीर की कही एक भी बात नहीं दुहरायी। उसने सोचा कि नयी जगह पर आया है, इसलिए घबराता होगा। उसने दो दिन उसे फल खिलाये और दाने डाले। पर कोई फ़ायदा नहीं हुआ।

परेशान वीर उसे बूढ़े आदमी के पास ले गया और कहा ''अरे बुड्ढे, तुमने तो मुझे धोखा दिया। नगरवासियों को भी धोखा देकर पैसे कमाने की तुम्हारी चाल मैं अच्छी तरह समझता हूँ। तुमने तो कहा कि तोता अपने मालिक की हर बात दुहरायेगा। पर यह तोता तो एक भी शब्द दुहरा नहीं रहा है।'' नाराज़ होते हुए उसने कहा।

बुड्ढे ने तोते को अपने हाथ में लिया और उसे ग़ौर से देखता रहा। फिर उसने एक दो शब्द कहे, लेकिन उसने दुहराया नहीं। तो उसने वीर से कहा ''महाशय, आपसे पहले ही कह चुका हूँ कि वापस नहीं लूँगा; अपने-अपने भाग्य की बात है। मुझे तो संदेह है कि यह तोता बहरा है। किसी अच्छे वैद्य को दिखाना।''

-नितेश नायक

चाटिन

बहुत पहले चाटिन पेड़ों की लकड़ियों से ही पाठशालाओं में उपयोग में लाये जानेवाले श्यामपट बनाये जाते थे। इसे वृक्ष-शास्त्र में कहते हैं - अलस्टोनिया स्कोलारिस। अंग्रेज़ी में इसे 'डेविल्स ट्री' (भूतों का पेड़) कहते हैं। हिन्दी में इसे 'चाटिन', असामी में 'चैटीन' मराठी में 'पैतान' ओरिया में 'चाटीनन' बंगाली में 'चाटिम' कहते हैं। मलयालम और तमिल में 'पाला', कन्नड में 'मुद्दले' और तेलुगु में 'पलाशि' कहते हैं। संस्कृत में 'सप्तवर्ण' के नाम से पुकारा जाता है। पाँच-छे से.मी. की लंबाई के इस पेड़ के पत्ते मोटे होते हैं।

सदा हरा दीखनेवाला चाटिन पेड़ पच्चीस मीटर की ऊँचाई तक बढ़ता है। इसका छिलका पक्का होता है। यह खाकी के रंग में खुरदरा होता है। कोमल हरे रंग में इसके छोटे-छोटे फूल गुच्छों में विकसित होते हैं। फूलों में सुगंधि होती है। गुच्छों में फलनेवाले इसके फलों की लंबाई ३०-४० सें.मी. की होती है। यह फल जोडियों में फलते हैं।

साल भर जहाँ वर्षा होती है, मुख्यतया पश्चिमी घाटियों में ये पेड़ अधिकतर देखे जा सकते हैं। इसके छिलके में औषधियों के गुण हैं। इसकी लकड़ी नरम होती है। इसका उपयोग पेटी, पेन्सिल, तथा दियासलाई बनाने के काम में होता है।

कुछ प्रांतों में विश्वास किया जाता है कि इस पेड़ पर भूत-प्रेत निवास करते हैं। पश्चिमी घाटियों के कुछ प्रांतों में पहाड़ी जाति के लोग इन पेड़ों के नीचे बैठने से डरते भी हैं।

हमारे देश के ऋषि : ७

दधीचि

अथर्व वेद चौथा वेद है। इस वेद के मूलपुरुष थे महर्षि दधीचि। ये महामुनि वंशज थे। दधीचि बचपन से ही कठोर नियमों व निष्ठाओं का पालन करते थे। एकाग्र चित्त से ध्यान में मग्न रहते थे। दधीचि की तीव्र तपस्या के कारण उनकी हड्डियाँ भी पवित्र हो गयीं।

देवताओं के अधिपति इंद्र ने, दधीचि को प्रकृति के चंद रहस्य बताये। बताने के पहले इंद्र ने नियम रखा था कि ये रहस्य किसी को बताये ना जाएँ। दधीचि ने उन नियमों को मान लिया। किन्तु कुछ समय बाद वैद्यवेत्ता अश्विनी देवताओं ने दधीचि से प्रार्थना की कि वे रहस्य उन्हें बतावें। दधीचि इनकार ना कर सके और रहस्य उन्हें बता दिया।

इंद्र को इस बात का पता चल गया। अपने वादे से मुकरे दधीचि के सिर को काट देने का उसने निश्चय किया। यह बात अश्विनी देवताओं को मालूम हुई। इंद्र के पहले ही उन्होंने दधीचि के सिर को काटा और उसकी जगह पर घोड़े का सिर रख दिया। इंद्र ने उस सिर को काट दिया। फिर अश्विनीदेवता दधीचि का असली सिर ले आये और उनके धड से जोड दिया। दधीचि इस विपत्ति से बच गये और पुनः संपूर्ण मनुष्य बन गये।

देव और असुरों के बीच युद्ध सुदीर्घ काल तक चलता रहा। देवता परस्पर कहने लगे कि जब तक दधीचि की हड्डियाँ ना लायी जाएँ और उन्हें हथियारों के रूप में उपयोग में ना लायी जाएँ, तब तक देवता राक्षसों से बच नहीं सकते और उनपर विजय पा नहीं सकते। ये बातें दधीचि के कानों में पड़ीं। तक्षण ही वे दयानदी के तट पर ध्यान-मग्न हो बैठ गये और अपने तपोबल के बल पर, अपनी योगाग्नि से अपने तन को जला ड़ाला। फिर अपनी हड्डियाँ देवताओं को समर्पित किया। उनका अपूर्व त्याग धृव तारे की तरह त्यागियों के इतिहास में सुस्थिर हो गया।
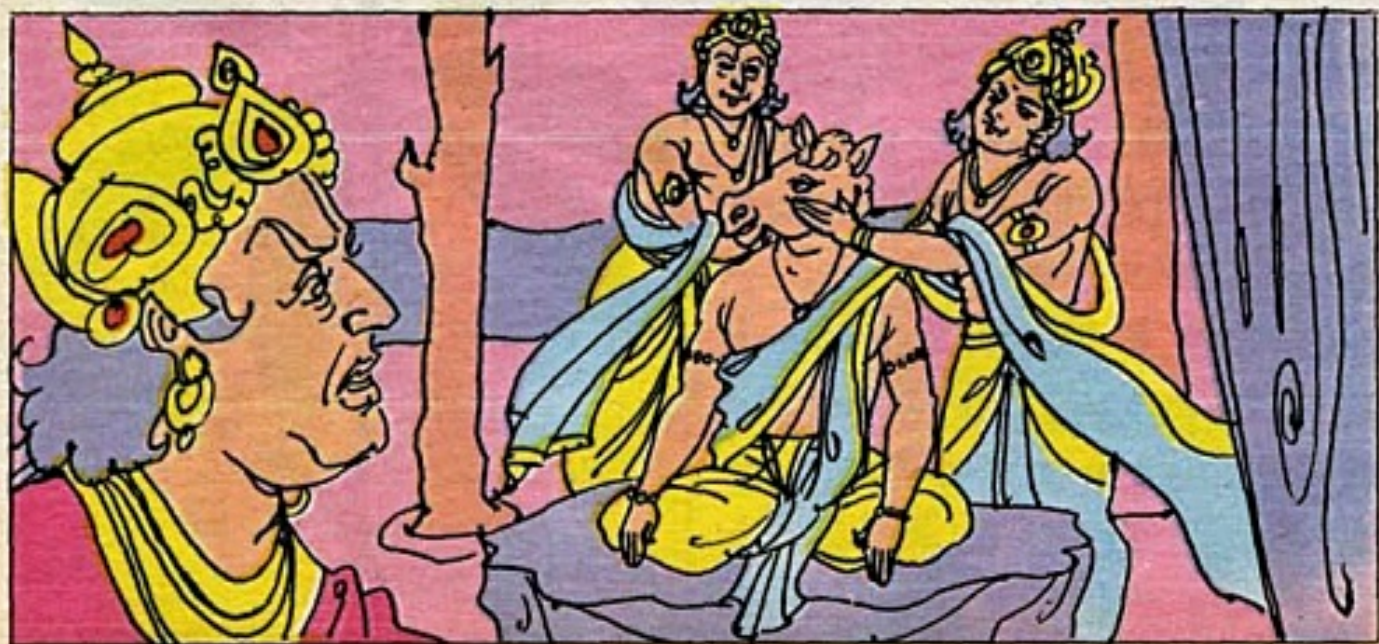
क्या तुम जानते हो ?

१. गुरुनानक जब गाते थे, तब उनके एक शिष्य 'रबाब' बजाते थे। उनका क्या नाम है ?

२. हमारे देश की एक नदी के चार नाम हैं। उसका नाम क्या है और वे चार नाम क्या हैं ?

३. जो विजयी होते हैं, वे पीछे हट जाते है और जो हारते हैं, वे आगे आते हैं। इस क्रीडा का क्या नाम है ?

४. श्वास-क्रिया का क्या वेग है ?

५. दक्षिण भारत में एकमात्र जैन गुफालय है। वह कहाँ है?

६. पर्शियिन साम्राज्य की स्थापना किसने की ?

७. हमारे पुराणों के अनुसार वे महान कौन थे, जिनके पैर में बाण लगने से मर गये ?

८. अमेरीका का राष्ट्रीय पक्षी कौन-सा है ?

९. विंध्य पर्वत की दक्षिणी दिशा में एक ऊंचा पर्वत शिखर है। वह कौन-सा है?

१०. एक ग्रीक पंडित ने पुस्तकालय का प्रबंध किया। उनका क्या नाम है ?

११. 'उड़ता साँप', इसका यह नाम कैसे पड़ा ?

१२. दुनिया का सबसे लंबा रेल्वे मार्ग कौन-सा है ?

१३. चार समुद्र ऐसे हैं, जिनके नामों में उनके रंग निहित हैं। इन समुद्रों के क्या नाम हैं ?

उत्तर

१. मर्दाना

२. ब्रह्मपुत्र। टिबेट में इसे सांगपो कहते हैं। अरुणाचल प्रदेश में कहते हैं दि बांग, सियांग। बंगला देश में मेघना कहते हैं।

३. जूडो

४. मिनिट में पंद्रह - अठारह बार

५. तमिलनाडु के पुदुकोटै के समीप का सित्तनवासल

६. सैरस सम्राट

७. श्रीकृष्ण

८. गंजे सिर का गरुड पक्षी

९. केरल राज्य के पश्चिमी घाटियों का आनैमुडि। (१२,७०० मीटरों की ऊँचाई)।

१०. यूरोपिडेस

११. इसलिए कि एक पेड से दूसरे पेड़ पर कूदता है।

१२. मास्को से व्लाडिवास्टक तक जाता हुआ साइबेरियन रेल्वे मार्ग (५,८६४ मील)

१३. सफ़ेद समुद्र, काला समुद्र, लाल समुद्र, पीला समुद्र।

विश्वास

प्रेमचंद बहुत बड़ा वैद्य था। सब कहते थे कि उसके हाथ में जादू है। पुखराज नामक एक युवक उसके पास चिकित्सा का ज्ञान प्राप्त करने आया। वह उसका शिष्य बना। अपने गुरु की प्रतिभा को देखकर वह ड़रता भी था और ईर्ष्या भी करता था। वह सोचता रहता था कि क्या मैं इतना बड़ा वैद्य बन पाऊँगा ?

एक बार उस गाँव में और पड़ोस के गाँवों में एक नयी बीमारी फैली। जो इस नयी बीमारी का शिकार होता था उसे भूख ही नहीं लगती थी। कुछ भी खाने की इच्छा ही नहीं होती थी। इससे वह क्षीण होता जाता था। इसलिए इस रोग का नाम भी पड़ा, क्षीण रोग।

इस क्षीण रोग को दूर करने के लिए प्रेमचंद के पास कोई दवा नहीं थी। उसने चार दिनों तक लगातार मेहनत की, वैद्यग्रंथों का पठन किया और ऐसी बीमारी के निवारण का मार्ग ढूँढ़ निकाला। उसने इसके लिए आवश्यक जडी-बूटियों को इकट्ठा करने का भार पुखराज को सौंपा।

पुखराज ने जब जड़ी-बूटियों का संग्रह किया तब वैसी ही जड़ी-बूटियों का संग्रह करके अलग रख लिया। गुरु की निगरानी में दवा तैयार की और गोलियाँ एक शीशे में भर दीं। अलग जड़ी-बूटियाँ वह अपने लिए जो लाया था, उनकी भी गोलियाँ बनायीं और उन्हें छिपाके रखा। उनके बारे में गुरु से उसने कुछ भी नहीं कहा।

अब उसमें आत्मविश्वास हद से ज़्यादा बढ़ गया, इसलिए उसने एक दिन गुरु से कहा "गुरुवर, क्षीण रोग फैल गया है। आपके लिए मैंने गोलियाँ बनाके रखी हैं। मुझे भी मालूम हो गया कि इन्हें कैसे बनानी हैं, इसलिए मैं भी इस रोग के निवारण के लिए इलाज करूँगा और लोगों को बचाऊँगा। तब

सरन तेजा

मेरे पास अधिकतर रोगी भी आयेंगे। मैं नाम भी कमा पाऊँगा। आपका शिष्य कहलावूँगा। मुझे आपके आशीर्वाद चाहिये।''

इसपर प्रेमचंद ने 'ना' के भाव में सिर हिलाते हुए कहा ''चिकित्सा की जानकारी अलग है और चिकित्सा करना अलग है। एक और साल मेरे पास रहकर सीखोगे, तभी तुम इलाज कर पाओगे। तब भी तुम्हें छोटे-छोटे रोगों की चिकित्सा से शुरू करना होगा। क्षीण रोग बड़ा ही ख़तरनाक रोग है। तुमने दवा जान ली, इसका यह मतलब नहीं कि स्वयं चिकित्सा करो। अगर तुमने ऐसा किया तो नाम कमा नहीं पाओगे।''

पुखराज ने गुरु की बातों का खंडन नहीं किया। किन्तु उसने गुरु से प्रार्थना की ''अब क्षीण रोग बड़ी मात्रा में व्याप्त है। वैद्यवृत्ति को प्रारंभ करने का यही सही अवसर है। ऐसा अवसर कभी नहीं मिलेगा, इसलिए मुझे अनुमति दीजिये।''

प्रेमचंद को उसपर दया आयी। उसने कहा ''ठीक है, पड़ोस के गाँवों में वैद्यवृत्ति करो। हमने दवा की जो गोलियाँ बनायीं थीं, उन्हें रोगियों को खिलाने पर पहले दिन पेट में बड़ी जलन होगी। पहले ही रोगी से यह सच्चाई बता दोगे तो वह डर जायेगा। इसलिए बताना नहीं चाहिये। रोगी जलन सह नहीं पाता तो उससे कहना होगा कि दूसरे दिन से दवा बदलूँगा, किन्तु दूसरे भी दिन वही दवा देनी होगी। हो सकता है, रोगी दस दिनों तक तरह-तरह की तक़लीफ़ों का सामना करे। तुम्हें रोगी को इस भ्रम में रखना होगा कि तुम हर रोज़ दवा बदलते जा रहे हो और उसकी तक़लीफ़ों को दूर करने की कोशिश कर रहे हो। पर, वही गोलियाँ उसे देते रहो। दो हफ़्तों में अवश्य ही रोगी चंगा हो जायेगा। परंतु याद रखना, उस अवधि तक तुम्हें बड़ी सहनशक्ति और कुशलता से रोगियों को संभालते रहना होगा।''

इस विचित्र रोग की दवा हो भी सकती है परंतु रोगी नये वैद्य के पास बहुत कम जाते हैं। इसलिए पुखराज ने एक उपाय सोचा। निकलने के पहले उसने असली गोलियाँ ले

लीं और उनकी जगह पर नक़ली गोलियाँ रख दीं। नक़ली गोलियों से रोगी चंगे नहीं हो सकते, इससे गुरु का नाम खराब हो जायेगा और उसका नाम होगा। ऐसा सोचकर पुखराज पड़ोस के गाँव में पहुँचा। अपने को क्षीण रोग का चिकित्सक कहकर वैद्य करने लगा। इस रोग से पीड़ित सौ आदमी उस गाँव में थे। उनमें से दो ही आदमी इलाज के लिए पुखराज के पास आये। उसकी दो हुई गोलियाँ खाने पर उन्हें पेट में तीव्र जलन हुई।

पुखराज रोगियों के घर गया और समझाया कि ड़रने की कोई ज़रूरत नहीं है। उसने कहा "यह जलन दस दिनों तक लगातार होगी, पर दस दिनों के बाद बिल्कुल ठीक हो जाओगे। यह मेरे लिए एक चुनौती है। अगर ऐसा नहीं हुआ तो मैं गाँव छोड़ दूँगा।" रोगियों ने 'हाँ' कहा, पर हर दिन उनकी तक़लीफ़ें बढ़ती गयीं, तो पुखराज के पास आना बंद कर दिया।

इतने में सबको मालूम हुआ कि प्रेमचंद ने अपने गाँव में इस रोग की चिकित्सा शुरु कर दी। कुछ लोग जब प्रेमचंद से चिकित्सा कराने निकले तो पुखराज ने उन्हें रोकते हुए कहा "प्रेमचंद को इस संबंध में मुझसे ज़्यादा मालूम नहीं है। वहाँ जाने पर भी कोई फ़ायदा नहीं होगा।"

फिर भी जिन्हें प्रेमचंद के पास जाना था, गये। "बीमारी ठीक नहीं होगी, तो उनकी बुद्धि आप ही आप ठिकाने आयेगी" सोचकर पुखराज अपने ही आप हँसता रहा। गोलियाँ बदलकर उसने जो चाल चली, उसी को सोचकर वह खुश हो रहा था।

पुखराज ने जैसा सोचा, उसके बिल्कुल विपरीत ही हुआ। प्रेमचंद के पास चिकित्सा के लिए जो गये थे, चार ही दिनों में चंगे होकर वापस आ गये। अब उन्हें किसी तरह की तक़लीफ़ नहीं हो रही है।

बाक़ी लोग भी, जो पुखराज से दवा ले रहे थे, प्रेमचंद से दवा लेने चले गये। उन्हें पुखराज पर विश्वास नहीं रहा। उसने सोचा भी नहीं था कि ऐसा भी हो सकता है। नाराज़ होते हुए वह प्रेमचंद के घर गया।

उस समय प्रेमचंद का घर रोगियों से भरा हुआ था। उसे पुखराज की बातें सुनने के लिए समय ही नहीं था। काफ़ी अंधेरा छा जाने तक वह रोगियों को दवा देता रहा। जब सब रोगी चले गये, तब पुखराज ने गुरु से कहा "आपने मेरे साथ बड़ा अन्याय किया। मैं आपसे बहुत ही नाराज़ हूँ।"

प्रेमचंद चकित होकर बोला "मैंने तुम्हारे साथ अन्याय किया? बोलो, क्या अन्याय किया है?"

"क्षीण रोग को दूर करने के लिए आपने मुझे दवा बतायी और आपने बताया कि इस रोग के दूर होने में दो हफ़्ते लगेंगे। आपने कहा भी कि इस अवधि में रोगी को बहुत तक़लीफें होंगीं। पर आप तीन ही दिनों में रोगी को चंगा कर रहे हैं। वह भी बड़ी आसानी से, बिना किसी तक़लीफ़ के। इसी कारण कोई भी बीमार मेरे पास नहीं आ रहा है।" पुखराज ने कहा।

यह सुनकर प्रेमचंद चकित हुआ और बोला "तुमने तैयार करके जो गोलियाँ यहाँ छोड़ी थीं, उन्हें ही रोगियों को दे रहा हूँ। इस दवा के बारे में मैंने तो तुमसे कुछ भी छिपाया नहीं था। तुमसे मैंने साफ़-साफ़ बताया था कि किन-किन जड़ी-बूटियों को कितनी मात्रा में मिश्रण करना चाहिये। अलावा इसके, वह दवा भी तुम्हीं से तैयार करायी थी।"

गुरु की बातें सुनकर पुखराज का चेहरा फीका पड़ गया। इसका यह मतलब हुआ कि उसने जो नक़ली दवा वहाँ छोड़ी थी, वह असली दवा से अधिक प्रभावशाली है। गुरु प्रेमचंद ने वैद्यग्रंथों का पठन करके जो दवा बनवायी थी, उससे भी अधिक प्रभावशाली है, उसकी बनायी दवा। उसे आश्चर्य हुआ कि ऐसा कैसे हो गया।

पुखराज ने प्रेमचंद से सच-सच बता दिया और कहा "गुरुवर, आगे से मैं ही स्वयं दवाएँ बनाऊँगा। अब साबित हो गया है कि मेरी दवाओं के सामने आपकी दवाएँ फीकी हैं, सारहीन हैं। आप भी मेरी दवाओं का उपयोग कीजिये। आपकी कमाई भी बढ़ेगी। मेरी श्रेष्ठता को मानिये और अपनी कमाई का

आधा हिस्सा मुझे दीजिये।''

पुखराज की बातें सुनकर प्रेमचंद का मुख क्रोध से तमतमा गया। उसने तीव्र स्वर में कहा ''अरे मूर्ख, क्षीण रोग के लिए मैंने दवा बनाने को कहा तो मुझसे छिपाकर एक और दवा भी बना ली। तुमने ऐसा करके अक्षम्य अपराध किया है। तुम्हें न्यायाधिकारी को भी सौंप सकता हूँ। इस नीच काम के लिए तुम्हें सज़ा भी दिलवा सकता हूँ।''

पुखराज ने गुरु को कभी भी इतना नाराज़ होते हुए नहीं देखा। वह ड़रता हुआ बोला ''मैंने जो दवा बनायी थी, उससे परिणाम तो अच्छा ही निकला ना गुरुवर? आपके लिए अच्छा ही साबित हुआ ना?''

प्रेमचंद शांत हुआ और पुखराज ने जो दवा बनायी थी, उसके बारे में पूरे विवरण जाने। फिर उसने कहा ''इसमें क्षीण रोग के कम होने के औषध नहीं हैं। अगर यह दवा तुम रोगियों को देते तो वे मर जाते। अच्छा हुआ, मैंने इन दवाओं का इश्तेमाल नहीं किया। मैंने दूसरी ही दवा रोगियों को दी। नयी दवा तो मैं आज बनाऊँगा।''

इसके बाद पुखराज, प्रेमचंद के घर पर रहा और ग़ौर से देखता रहा कि गुरु दवा कैसे बना रहे हैं। अब भी उसकी समझ में नहीं आया कि तीन ही दिनों में रोगी कैसे ठीक हो गये ? कैसे उनका रोग दूर हो गया।

अपना संदेह व्यक्त किया तो प्रेमचंद ने कहा ''आदमी की बीमारियाँ दवाओं से ही दूर नहीं होतीं। विश्वास से कभी-कभी अद्भुत काम होते हैं। मैं जो दवा देता हूँ, उसपर विश्वास है रोगियों को। मुझपर उन्हें पूरा-पूरा भरोसा है। इससे उनकी बीमारी दूर हुई। पर यह मत समझना कि हमेशा ऐसा होता है। तुमने बड़ी ग़लती की। तुमने रोगियों के जीवन के साथ खिलवाड़ किया। ऐसा जो करते हैं, उन्हें वैद्य नहीं बनना चाहिये। अच्छा यही होगा कि तुम कोई दूसरा पेशा ढूँढ़ लो।''

पुखराज को लगा कि गुरु ठीक कह रहे हैं। बिना कुछ बोले सिर झुकाकर वह वहाँ से चला गया।

मांत्रिकों का द्वीप

उत्तरी तट के एक गाँव में केशव नामक ग़रीब जवान रहा करता था। वह चाहता था कि द्वीपों में जाऊँ और धन कमाऊँ। इस इच्छा से वह एक व्यापारिक जहाज़ में निकला।

थोड़े दिनों की यात्रा के बाद जहाज़ भयंकर तूफान में फँस गया। आख़िर जहाज डूब गया। पता नहीं, शेष यात्रियों पर क्या गुज़रा, केशव मात्र को लहरों ने एक द्वीप के समुद्री तट पर पहुँचाया।

उस द्वीप में ना ही कोई मनुष्य था, ना ही कोई जानवर या पक्षी। जहाँ देखो, वहाँ नारियल के पेड़ थे। वे फलों से लदे हुए थे। नारियल का पानी पीकर अपना पेट भरने के अलावा केशव को कोई और दूसरा उपाय नहीं सूझा। इसलिए वह नारियल के पेड़ पर चढ़ा।

तब उसने बड़ा ही विचित्र दृश्य देखा। उसने देखा कि एक जंगली सुवर हवा में उड़ता हुआ उसी द्वीप की ओर आ रहा है। वह आश्चर्य में डूब गया, क्योंकि उस सुवर के पंख नहीं थे। फिर भी वह उड़कर आया और द्वीप में उतरा। सूखी झाड़ी में वह सो गया और खर्राटें लेने लगा।

केशव पेड़ से उतरा और सुवर को ग़ौर से देखा। वह तो मामूली सुवर की ही तरह था, किन्तु उसके मुँह में मजबूत दाँत थे। उस सुवर के बग़ल में ही एक हीरा था। सुवर ही उसे ले आया होगा।

केशव ने हीरे को उठाया और उसकी परीक्षा की। इतने बड़े हीरे के बारे में उसने कभी सुना नहीं था।

केशव ने मन ही मन सोचा कि इस हीरे को लेकर इस द्वीप से चला जाऊँ तो मेरी दरिद्रता दूर हो जायेगी। मैं धनवान बन जाऊँगा।

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

सिर उठाकर ऊपर देखने लगा। केशव के हाथ में रखे हीरे को उसने देख लिया। वह ज़ोर-ज़ोर से गरजने लगा।

केशव ने एक भारी नारियल तोड़ा और अपना पूरा बल लगाकर सुवर के मुँह पर दे मारा। चोट खाकर सुवर बेहोश हो गया। केशव ने इस मौक़े का फ़ायदा उठाया और हीरे के साथ पेड़ से नीचे उतरा। एक बड़े पथ्थर से सुवर के सिर को चकनाचूर कर दिया, जिससे सुवर मर गया। मरते ही सुवर एक मांत्रिक के रूप में बदल गया।

एक मांत्रिक यह सुवर बना, क्योंकि सुवर के रूप में हवा में उड़ना उसे अच्छा लगता था। केशव तो यह जानता नहीं था कि उसने सुवर को नहीं, बल्कि एक मांत्रिक को मारा। मांत्रिक की शक्तियों का मूल था हीरा और वह महिमावान हीरा अब उसके हाथ में आ गया।

हीरा महिमावान था, इसलिए केशव का भय भी दूर हो गया। उसने चाहा कि द्वीप में घूमूँ और सब कुछ देखूँ। वह भी हवा में उड़ता हुआ द्वीप के अंदरी भाग को देखने निकल पड़ा।

दूरी पर उसे धुआँ दिखायी पड़ा। उसे लगा कि वहाँ कोई अवश्य होंगे। उनसे बात करने उस तरफ़ बढ़ा।

वहाँ पहुँचने पर उसने देखा कि वहाँ एक झोंपड़ी है। एक लंगड़ा उसके सामने बैठा

इतने में सुवर नींद से उठ जाने के प्रयत्न में लग गया। उसने सोचा कि शायद यह सुवर मुझे मार ड़ालेगा। पेड़ पर ही रह जाता तो कितना अच्छा होता। वह भय से काँप रहा था।

उसके मन में यह विचार आया कि नहीं, हवा में उड़ता हुआ नारियल के पेड़ की टहनियों के बीच में जा गिरा।

वह सोचने लगा "इस हीरे में अवश्य ही कोई महिमा है। ऐसा लगता है कि यह हीरा जिसके पास होगा, उसके मन की हर इच्छा पूरी करेगा। इसकी महिमा के ही कारण मैं हवा में उड़कर यहाँ आ पाया हूँ।" इतने में सुवर उठ बैठा। वह पेड़ के पास आया और

हुआ आग में बकरी को जला रहा था।

केशव उस लंगड़े के पास गया और पूछा "महाशय, मुझे खाने के लिए थोड़ा-सा खाना और रहने के लिए थोड़ी-सी जगह दिला सकते हैं ?"

"मेरे पास जो है, उसी में आधा तुम खाओ।" कहते हुए उस लंगड़े ने उस जली बकरी का आधा हिस्सा दिया।

उसकी आँखों को देखते हुए केशव को लगा कि हो सके तो वह उसे भी खा जायेगा। उस आदमी ने केशव से पूछा "तुम यहाँ कैसे आ पाये ?"

केशव ने अपनी पूरी कहानी बतायी और उसे हीरा दिखाया। "मैं लंगड़ा हूँ। चल-फिर नहीं सकता। तुम मुझे अपना यह हीरा दोगे तो मैं तुम्हें महिमा से भरी कुल्हाड़ी दूँगा। उसकी मूँठ पर हाथ रखकर आज्ञा दो कि आग जलाओ, तो वह लकड़ी काटकर लायेगी और आग जलायेगी। उसके सिर पर हाथ रखकर हुक्म दो कि फलाने का सिर उड़ा दो तो वह, जिस व्यक्ति का सिर तुम उड़ाना चाहते हो, उड़ा देगी।" लंगड़े मांत्रिक ने कहा।

"अच्छा, यह अदला-बदली मुझे भी पसंद है" कहकर उसने इस हाथ से हीरा उसे दिया और उस हाथ से कुल्हाड़ी ली। केशव ने तुरंत कुल्हाड़ी के सिर पर हाथ रखा और आदेश दिया कि लंगड़े का सिर उड़ा दो। बस, देखते-देखते मांत्रिक का सिर कट गया।

अच्छा हुआ, केशव ने पहले से ही जागरूकता बरती। नहीं तो वह मांत्रिक, उस हीरे की महिमा से उसे आग में झोंक देता।

केशव ने सिर्फ़ मांत्रिक को ही नही मारा बल्कि उसकी कुल्हाड़ी भी प्राप्त कर ली। वह हीरा और कुल्हाड़ी को लेकर एक और झोंपड़ी के पास आया। उस समय सूर्यास्त हो रहा था। उस झोंपड़ी के बाहर एक आदमी बैठा था, जिसके हाथ नहीं थे। पास ही एक चबूतरा था और एक मटका। अपने पास आते हुए केशव को देखकर वह आदमी डर गया और उसने अपनी ठुड्डी से मटके को थोड़ी दूर हटाया। उस मटके में जो पानी था, नीचे

लुढ़क गया और प्रवाह बनकर केशव की तरफ़ बढ़ने लगा। धीरे-धीरे उस प्रवाह ने बाढ़ का रूप लिया और झोंपड़ी के हर्द-गिर्द की सारी ज़मीन को डुबोने लगा। अब केशव को यह समझने में देर नहीं लगी कि मटके में महिमा है। उसी की महिमा से थोड़ा-सा बाढ़ बन गयी। यह भी पूर्व मांत्रिकों की तरह खतरनाक है और इससे चौकन्ना रहना चाहिये।

ऐसे तो केशव उसमें डूब जाता, पर हीरे की सहायता से वह शून्य में उड़ा और उस आदमी के बिल्कुल ही बग़ल में आ खडा हो गया। आश्चर्य से बिन हाथों के उस आदमी ने पूछा "वाह, यह विद्या तो विलक्षण है।"

केशव ने हीरा दिखाते हुए कहा "यह पास हो तो जो भी चाहिये, पाया जा सकता है।" उसने यह रहस्य जान-बूझकर ही बताया।

"मेरा यह मटका लो और अपना हीरा मुझे दो। महिमा से भरा यह मटका, जो भी भोजन-पदार्थ चाहते हो, देने की शक्ति रखता है। इसको पलटोगे तो देश के देश पानी में डूब जाएँगे।" आदमी ने कहा।

केशव ने हीरा उसे देते हुए मटके को अपने हाथ में लिया। तुरंत कुल्हाड़ी के सिर पर अपना हाथ रखा और आज्ञा दी कि उसका सिर काट दो। दूसरे ही क्षण उस बिन हाथ के आदमी का सिर कट गया।

अब केशव के पास महिमा भरी तीन वस्तुएँ थीं। हीरा, कुल्हाड़ी, मटका। उस दिन रात को वहीं सो गया। दूसरे दिन द्वीप में वह घूमता रहा। शाम को एक जंगल में आया।

उस जंगल में से तालियों की ध्वनि ज़ोर-ज़ोर से आ रही थी। शेर, बाघ तथा अन्य मृग डरकर झुंडों के झुंड इधर-उधर भागने लगे।

थोड़ी देर बाद वह ध्वनि बंद हो गयी। केशव उस ओर बढ़ा। उसने देखा कि पेड़ों के बीच में राक्षस के आकार में कोई बैठा हुआ था। उसके सामने ढोल जैसा एक बाजा था। केशव को देखते ही उसने पुकारा, आ जाओ खाना खाने। 'जरूर' कहता हुआ केशव उससे दूर आसन जमाकर बैठ गया। राक्षस ने उसे पका माँस देना चाहा। केशव को संदेह हुआ कि वह

नरमांस है।

"मैं शाकाहारी हूँ, माँस नहीं खाता" कहते हुए वह अपने मटके में से खाना लेकर खाने लगा।

राक्षस ने पूछा "यह कैसा मटका है?" केशव ने कहा" जो आहार हमें चाहिये, वह हमें इससे मिल जाता है।"

"वह मटका मुझे दो और यह ढ़ोल ले लो। इसकी एक तरफ़ बजाएँगे तो ड़र से सब प्राणी भाग जाएँगे। दूसरी तरफ़ बजाओगे तो असंख्य सेना निकल आयेगी और तुम्हारी रक्षा करेगी" राक्षस ने कहा।

'ठीक' कहकर केशव ने अपना मटका उसे दिया और उसकी ढ़ोल ले ली। फिर तक्षण ही अपनी कुल्हाड़ी की मदद से उसका सिर कटवा दिया।

हीरा, कुल्हाड़ी, मटका, ढ़ोल लेकर बहुत समय तक केशव देश में घूमता रहा और आख़िर एक राज्य में पहुँचा। उस देश का राजा बड़ा पापी था। अपनी ही प्रजा को दिन दहाड़े वह लूटता था और उन्हें मरवा देता था। राज्य में कोई नया आदमी आये तो उसे पकड़वाकर अपने पास बुलाता था।

केशव जैसे ही उस राज्य में घुसा, बारह सिपाही उसे पकड़ने आये। ढ़ोल बजाने पर वे ड़रकर भाग गये।

यह जानकर राजा ने सेना भेजी। केशव ने फिर से ढ़ोल बजायी और उन्हें भगा दिया। इस बार राजा ने अपनी पूरी सेना भेजी। केशव ने अपना मटका पलटकर बाढ़ की सृष्टि की। सेना उस बाढ़ में बह गयी।

राजा अकेला रह गया। केशव उसके पास गया और अपनी कुल्हाडी से उसका सिर कटवा दिया। प्रजा ने बहुत संतुष्ट होकर केशव को राजा बनाया।

मंत्रियों ने केशव से कहा "हमारे देश की सेना नहीं रही। अब देश की रक्षा कैसे हो?"

केशव ने ढ़ोल की दूसरी तरफ़ बजायी और असंख्य सेनाओं की सृष्टि की। मंत्री बहुत ही प्रसन्न हुए। उन्हें लगा कि ऐसे राजा के होते हुए हमारे देश पर कोई भी शत्रु आक्रमण करने का साहस नहीं करेगा।
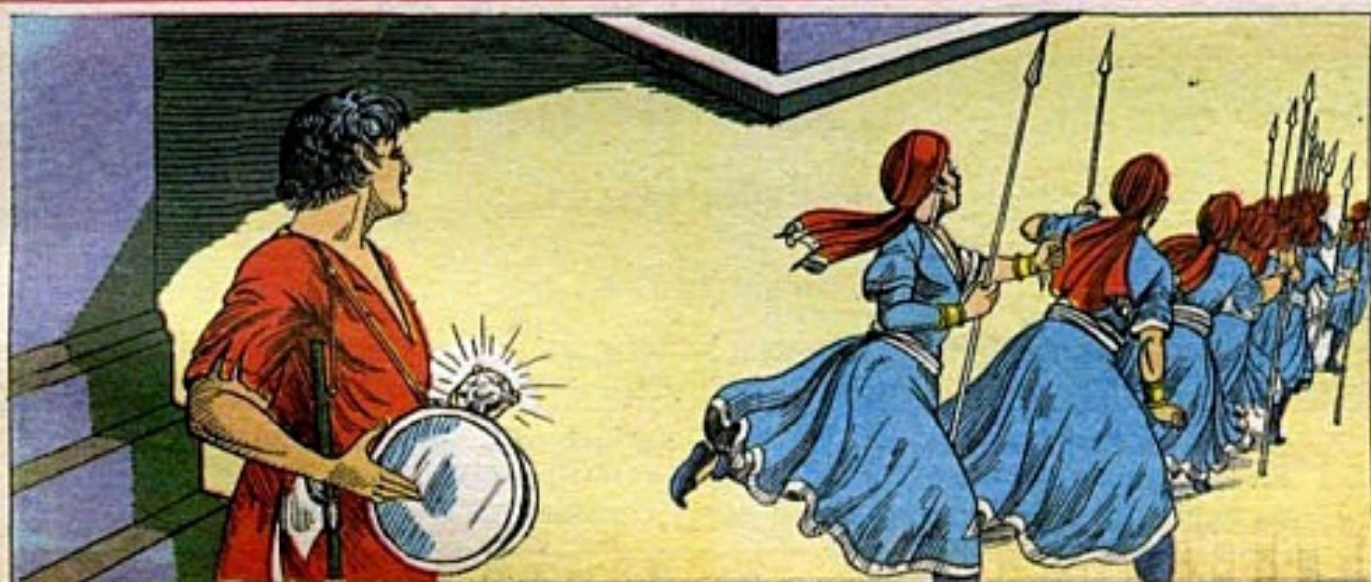
फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार १००

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ, दिसंबर, १९९५ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी।

Bhanu

Tajy Prasad

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ १० अक्तूबर, '९५ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००/- का पुरस्कार दिया जायेगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें।

चन्दामामा, चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६.

अगस्त, १९९५, की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **नाचे गायें धूम मचायें**

दूसरा फोटो : **देश प्रहरी हम कहलाएँ**

प्रेषक : **अल्पना गोयल**

गोयल भवन, रेल्वे रोड, सहारनपुर, उत्तर प्रदेश, पि. २४७ ००१.

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

CHANDAMAMA (Hindi) October 1995 Regd. No. M. 5452